नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

मासिक समाचार पत्र • वर्ष 3 अंक 4
मई 2001 • तीन रुपये • बारह पृष्ठ

मई दिवस विशेषांक

मई दिवस के अवसर पर विशेष सम्पादकीय अग्रलेख

मज़दूर आंदोलन के क्रान्तिकारीकरण की प्रतिज्ञा करो!

लखनऊ। मई दिवस वह दिन **है जब तमाम देशों के मेहनतकश वर्ग, वर्ग-चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न मनाते हैं, इंसान के हाथों इंसान के शोषण और दमन के खिलाफ अपनी संघर्षशील एकजुटता का इजहार करते हैं, करोड़ों मेहनतकशों को भूख और ग़रीबी की ज़िन्दगी से आज़ाद कराने की प्रतिज्ञा करते हैं।** (*मई दिवस के अवसर पर दुनिया के मज़दूरों के महान नेता और शिक्षक लेनिन द्वारा 1904 में लिखे गये पर्चे से*)।

आज जब नकली लाल झंडा उड़ाने वाली मज़दूर वर्ग की गद्दार पार्टियों और उनकी पुछल्ली ट्रेड यूनियनों ने मई दिवस को एक सालाना कर्मकांड में बदल डाला है और संघर्ष के नाम पर दुअन्नी-चवन्नी के लिए बेजान कवायदें करवाते हुए मज़दूर वर्ग की स्मृतियों से उसके ऐतिहासिक मिशन को धो-पोंछ डाला है तो मई दिवस के मौके पर इस प्रतिज्ञा का महत्व पहले से कई गुना अधिक बढ़ जाता है। इसके साथ ही आज जब पूरी दुनिया के पैमाने पर मेहनत के लुटेरे ख़तरनाक ढंग से एकजुट होकर मेहनतकशों पर वहशी भेड़ियों की तरह टूट पड़े हैं तो इस बात का महत्व भी पहले से कई गुना अधिक बढ़ गया है कि मई दिवस पर तमाम दुनिया के मेहनतकश पूंजीवाद-साम्राज्यवाद के खिलाफ अपनी संघर्षशील एकजुटता का इजहार करें।

'काम के घंटे आठ करो' का नारा बुलन्द करते हुए 1886 की पहली मई को जब शिकागो के बहादुर मज़दूरों ने संघर्ष का शंखनाद किया था तो यह इस बात का एक प्रमाण था कि मज़दूर वर्ग, वर्ग-चेतना से लैस हो चुका है। शिकागो के मज़दूरों ने यह मांग किसी एक कारखाने के मालिक के सामने नहीं रखी थी। जैसा कि लेनिन ने कहा था कि काम के घंटे कम करने की मांग **"समूचे सर्वहारा वर्ग की मांग है, जो अलग-अलग मालिकान के सामने नहीं बल्कि समूचे मौजूदा सामाजिक तथा राजनीतिक ढांचे के प्रतिनिधि के रूप में शासक अधिकारियों के सामने, समूचे पूंजीपति वर्ग के सामने, उत्पादन के सारे साधनों के मालिकों के सामने उठायी जाती है।"**

मज़दूर वर्ग की इसी वर्ग-चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न मनाने के लिए पहली मई 1889 को दुनिया के मज़दूरों के दूसरे अन्तरराष्ट्रीय संगठन (जिसे दूसरे इण्टरनेशनल के नाम से जाना जाता है) के पेरिस कांग्रेस में मज़दूर वर्ग के महान शिक्षक फ्रेडरिक एंगेल्स के प्रस्ताव पर हर साल मई दिवस मनाने का फैसला लिया गया था।

आज के समय में मई दिवस की इसी क्रान्तिकारी स्पिरिट को ताजा करना आज सबसे अहम चीज़ है। देश के हुक्मरानों ने पिछले दस सालों में उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों से मेहनतकश वर्ग के ऊपर जो हमला बोला है उसने सभी वर्ग सचेत मज़दूरों और मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी हरावलों के सामने जो तमाम नयी-नयी चुनौतियां पेश की हैं उनमें सबसे अहम चुनौती है मई दिवस की क्रान्तिकारी परम्परा को फिर से ज़िन्दा करना। पिछले दस वर्ष इस बात के नंगे प्रमाण हैं कि मज़दूर आन्दोलन के भीतर घुसे हुए पूंजीपति वर्ग के तरह-तरह के एजेंटों ने मज़दूर आन्दोलन की ताकत को, उसकी एकता को कितना खोखला बना डाला है। हुक्मरानों के हमलावर तेवर के सामने मज़दूर आन्दोलन के न टिक पाने, निजीकरण-उदारीकरण की नीतियों के खिलाफ लड़ी जा रही लड़ाइयों में हारों का सामना करने और मज़दूर वर्ग को हताशा-निराशा के गर्त में धकेल देने के लिए मज़दूर आन्दोलन के नेतृत्व पर हावी यही भितरघाती तत्व जिम्मेदार हैं। इन्होंने मज़दूर आन्दोलन को आज जिस अंधेरी गुफा में पहुंचा दिया है, वहां से बाहर निकालने की बुनियादी शर्त है कि मई दिवस की धुंआती मशाल को प्रज्जवलित किया जाये। 'वर्ग-चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न' तभी सही अर्थों में मनाया जा सकता है।

आज देशव्यापी मज़दूर आन्दोलन की इसी कमजोरी से हालात यहां तक पहुंच चुके हैं कि तमाम संघर्षों और कुर्बानियों की बदौलत जो अधिकार मज़दूर वर्ग ने अब तक हासिल किये थे, उन्हें भी शासक छीन रहे हैं। निजीकरण की मार से फिलहाल बचे रह गये कुछ

(पेज 10 पर जारी)

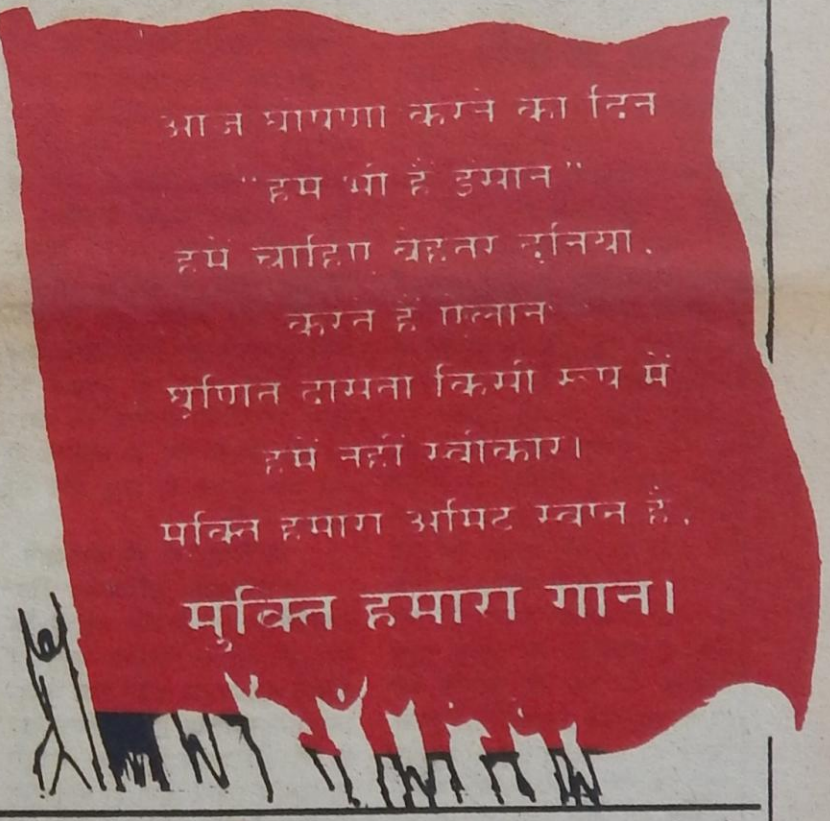

भीतर के पन्नों पर

1. नया श्रम कानून लागू होने से पहले ही मजदूरों पर दबाव बढ़ने लगा- पृ. 3
2. एकजुट संघर्ष ने मैनेजमेंट को झुकाया- पृ. 3
3. मुनाफे की वेदी पर मजदूरों की बलि- पृ. 3
4. पार्टी की बुनियादी समझदारी-पृ. 4
5. इण्डिया पेस्टीसाइड्स लि. लखनऊ में मजदूरों की छंटनी से उठे कुछ सवाल- पृ. 5
6. चीनी क्रान्ति कथा- पृ.6, 7, 8
7. लेनिन के साथ दस महीने- पृ.11

सम्पादकीय डेस्क

लखनऊ। मज़दूरों के खून से सने लाल झंडे को पैरों तले रौंदकर पश्चिम बंगाल में सत्ता-सुख भोग रही भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) का असली चेहरा पिछले दस वर्षों में जिस तरह बेनकाब हुआ है वह मज़दूर वर्ग को इसके भ्रमजाल से बाहर निकलने में काफी मददगार साबित हो रहा है। हर दिन इनकी काली करतूतों के नये-नये नमूने सामने आते रहते हैं। देश के मज़दूर आन्दोलन के इन भितरघातियों ने पूंजीपति वर्ग की जितनी बेशकीमती सेवाएं की हैं उसे देखते हुए यह आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि आने वाले कुछ वर्षों में इस पार्टी के किसी नेता को 'भारत रत्न' से विभूषित कर दिया जाये।

मज़दूर वर्ग के एक गद्दार की नज़र में पश्चिम बंगाल का भविष्य

तेइस वर्षों तक राजसुख भोगने के बाद ज्योति बसु ने जिस व्यक्ति को पश्चिम बंगाल की बागडोर सौंपी है, वह योग्य उत्तराधिकारी साबित हो रहा है। जी हां, पश्चिम बंगाल का नया मुख्यमंत्री बुद्धदेव भट्टाचार्य ज्योति बसु की लीक पर चलते हुए हर रोज पूंजीपतियों को नये-नये तोहफे दे रहा है और मज़दूर वर्ग से गद्दारियों के बेमिसाल सिलसिले को आगे बढ़ा रहा है।

मुख्यमंत्री की कुर्सी सम्हालने के साथ ही बुद्धदेव भट्टाचार्य ने ज्योति बस के पदचिह्नों पर चलने की घोषणा इस अन्दाज़ में की थी गोया ज्योति बसु का रास्ता स्वर्ग की ओर ले जाता है। सबसे पहले उसने पश्चिम बंगाल और देश-विदेश के सभी पूंजीपतियों को यह भरोसा दिलाया कि "औद्योगिक पुनर्जागरण" की जिस राह पर ज्योति बसु आगे बढ़ रहे थे, उसी पर वह भी चलेगा। फिर पूंजीपतियों की अलग-अलग सभाओं में जाकर उसने उन्हें ठोस आश्वासन दिये। किसी किस्म की कोई आशंका न रहे इसलिए उसने लिखित आश्वासन देना ज़रूरी समझा। पिछले 12 मार्च को टाटा घराने के प्रमुख अंग्रेजी अखबार 'द स्टेट्समैन' में बुद्धदेव भट्टाचार्य का एक लंबा लेख छपा, जिसका शीर्षक था – **'विजन ऑफ द फ्यूचर'**।

इस लेख में बुद्धदेव भट्टाचार्य ने पश्चिम बंगाल के भविष्य को एक खांटी मुनाफाखोर की नज़र से देखते हुए "औद्योगिक पुनर्जागरण" का एक खाका खींचा है। इसमें उद्यमियों की नयी पीढ़ी के लिए तरह-तरह की आकर्षक प्रोत्साहन व योजनाएं हैं, विदेशी पूंजी को लुभाने के लिए नये-नये चारे हैं, उन देशी-विदेशी कम्पनियों की सूची है जिन्होंने कृषि और उद्योग के अनेक सेक्टरों में पूंजी निवेश की आतुरता दिखायी है, कोयला खनन उद्योग सहित कई बुनियादी क्षेत्रों के निजीकरण की घोषणाएं हैं, लेकिन

(पेज 10 पर जारी)

बजा बिगुल मेहनतकश जाग, चिंगारी से लगेगी आग!

आपस की बात

बहस से क्यों कतराना

मैं 'बिगुल' का नियमित पाठक हूं। क्रान्तिकारी वामपन्थी आन्दोलन का एक हमदर्द होने के नाते आन्दोलन के मौजूदा बिखराव के कारणों पर सोचता रहा हूं। 'बिगुल' ने जब क्रान्तिकारी वामपन्थी आन्दोलन की समस्याओं पर बहस की शुरुआत की तो यह उम्मीद जगी कि विभिन्न धाराओं के विचारों से अवगत होने का एक अच्छा अवसर मिलेगा। लेकिन यह बहस गति नहीं पकड़ पा रही है। हिचकोले खाते हुए आगे बढ़ रही है। इसकी क्या वजह है? कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी ग्रुपों के प्रतिनिधि इस बेहद उपयोगी बहस में हिस्सा क्यों नहीं ले रहे हैं? क्या वे इस बहस को ही निरर्थक मानते हैं? या कहीं ऐसा तो नहीं कि अपने-अपने संगठनों के कार्यों से आत्मसंतुष्ट होकर एक सर्वभारतीय सर्वहारा क्रान्तिकारी पार्टी बनाने के काम को उन्होंने नियति के भरोसे छोड़ दिया है। कारण जो भी हो यह संवादहीनता हमारे जैसे लोगों की मायूसी को और गहरा ही बनाती है। सभी यह मानते हैं कि बिना एक देशव्यापी पार्टी बने क्रान्ति सम्भव नहीं है। फिर अपने मतभेद को दूर करने का प्रयास क्यों नहीं किया जाता? बहस से कतराना क्यों?

– राम स्वरूप
सिवान (बिहार)

मज़दूर आन्दोलन की दिशा स्पष्ट करें!

मज़दूर आन्दोलन के मौजूदा ठहराव को तोड़ने की दिशा में 'बिगुल' का प्रयास काबिले तारीफ है। पिछले एक साल से मैं इसे लगातार पढ़ रहा हूं। विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन की विरासत से मज़दूर वर्ग को परिचित कराने का एक बेहद ज़रूरी कार्य यह कर रहा है। साथ ही यह भूमण्डलीकरण के मौजूदा दौर में शासक वर्गों के विभिन्न हमलों और मज़दूर आन्दोलन के सामने पैदा हुई नयी चुनौतियों के बारे में भी काफी स्पष्टता और प्रखरता के साथ अपने पाठकों को सजग बना रहा है। आज के दौर में मज़दूर आन्दोलन की दिशा क्या हो, इसकी झलक तो 'बिगुल' में मिलती है लेकिन अभी कोई स्पष्ट दिशा निर्देश नहीं मिल पाता। 'बिगुल' के सम्मानित साथियों से मेरी अपील है कि वे इस बारे में हमारा स्पष्ट मार्गदर्शन करें।

–कल्याण समद्दार
रानीगंज (प.बं.)

प्रिय साथी!

'बिगुल' के अलग-अलग अंकों में छपी विभिन्न रिपोर्टों, टिप्पणियों और अग्रलेखों के जरिये हम मौजूदा दौर में मज़दूर आन्दोलन की दिशा के सवाल पर अपनी राय प्रस्तुत करते रहे हैं। दिशा के साथ-साथ कुछ औद्योगिक क्षेत्रों में पिछले कुछ वर्षों के दौरान चले मज़दूर आन्दोलनों के समाहार के रूप में हम नयी परिस्थितियों में आन्दोलन की नयी रणनीति और रणकौशलों के बारे में भी अपनी राय रखते रहे हैं। 'बिगुल' के प्रवेशांक में ही हमने मज़दूर आन्दोलन के मौजूदा ठहराव को तोड़ने और एक सर्वभारतीय क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी बनाने में 'बिगुल' जैसे मज़दूर अखबारों की भूमिका के बारे में एक विस्तृत आलेख भी दिया था। इस संबंध में सितम्बर,1999 अंक में प्रकाशित विशेष अग्रलेख भी महत्वपूर्ण है। इनका अध्ययन कर आप अपनी प्रतिक्रिया से हमें अवगत करायें तो खुशी होगी। (इन आलेखों की फोटोकापी हम आपको भेज रहे हैं)। लेकिन, फिर भी हम खुद यह महसूस कर रहे हैं कि दिशा के प्रश्न पर और अधिक स्पष्टता के साथ अपने विचारों को रखने की ज़रूरत है। 'बिगुल' के अगले अंकों में हमारा प्रयास रहेगा कि इस सवाल पर अलग से एक विस्तृत आलेख दिया जाये।

–सम्पादक मंडल

(पृष्ठ 3 से आगे)

अस्पताल के कर्मचारियों का आंदोलन

मेडिकल कालेज से तबादला कर अन्य डिस्पेंसरियों में भेजने का हुक्म जारी कर दिया। 14 फरवरी को शाम 4 बजे यूनियन के प्रधान को तबादले का हुक्म मिला। कुछ ही क्षणों में यह खबर पूरे अस्पताल में फैल गई। आध घण्टे के अन्दर एक सभा का आयोजन किया गया, जिसमें मैनेजमेण्ट के इस नादिरशाही फरमान के खिलाफ संघर्ष का ऐलान हुआ। अगले ही दिन सैकड़ों कर्मचारियों ने मेडिकल सुपरिटेन्डेन्ट तथा प्रिंसिपल का घेराव कर लिया। सारा दिन घेराव जारी रहा। शाम चार बजे आसपास से भारी तादाद में पहुंची पुलिस ने कर्मचारियों पर बर्बर लाठीचार्ज किया। यूनियन प्रधान को पुलिस ने बेरहमी से पीटा। महिला कर्मचारियों के साथ बदसलूकी की गई। कर्मचारियों ने, खासतौर पर महिलाओं ने पुलिस की गुण्डागर्दी का जमकर प्रतिरोध किया। कर्मचारियों की जबरदस्त घेराबन्दी के बावजूद पुलिस घेरा तोड़कर मेडिकल सुपरिटेन्डेन्ट और प्रिंसिपल को निकाल ले जाने में सफल हो गई।

इस घटना के अगले दिन डाक्टरों तथा सुरक्षा कर्मियों को छोड़कर बाकी सभी लोग हड़ताल पर चले गये। मैनेजमेंट के डर से कर्मचारियों की एक छोटी संख्या ही अस्पताल में रह गई। अस्पताल का सारा कामकाज ठप हो गया। मरीज लगातार अस्पताल से निकलने लगे। 20 फरवरी तक कर्मचारी डटे रहे। आखिरकार मैनेजमेंट को कर्मचारियों की फौलादी एकता तथा दृढ़ इरादों के आगे झुकना ही पड़ा। कर्मचारियों पर थोपे गये फर्जी पुलिस केस वापस लिये गये, यूनियन के प्रधान को तीन महीने के अन्दर वापस लाने, 20 दिनों के अन्दर सीनियरटी लिस्ट तैयार करने तथा अन्य सभी मांगें मानने के लिये मैनेजमेंट को विवश होना पड़ा। यह कर्मचारियों की एकजुटता की विजय थी।

आज जब देश में एक मज़दूर विरोधी माहौल बना हुआ हो, मज़दूरों-कर्मचारियों को बड़ी-बड़ी हारों का सामना करना पड़ रहा हो, ऐसे में डी.एम.सी. कर्मचारियों की संघर्षों द्वारा अर्जित यह जीत महत्वपूर्ण है। लेकिन जीत की खुशियां मनाते हुए भी यह याद रखना होगा कि संघर्ष तो अभी जारी है। देश के हुक्मरान आज जिस तरह मज़दूर-कर्मचारी विरोधी श्रम कानून बना रहे हैं, जगह-जगह छंटनी-तालाबंदी, ठेके पर भर्ती तथा यूनियनें खत्म करने की जो साजिशें चल रही हैं, उसमें तय है कि डी.एम.सी. का मैनेजमेंट भी चुप बैठने वाला नहीं है। वह फिर से यूनियन तोड़ने के नये हथकण्डे अपनायेगा। ऐसे में पूरी सतर्कता बरतते हुए यूनियन को अपनी एकता को विस्तारित करते हुए व्यापक मेहनतकश आबादी के संघर्षों के साथ अपने को जोड़ना होगा।

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आवादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मजदूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मजदूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मजदूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मजदूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भुट्टाछोर "कम्युनिस्टों" और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनवादों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों में क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

(पृष्ठ 3 से आगे)

नया श्रम कानून...

कारखानेदार मज़दूरों को और ज्यादा निचोड़ लेना चाहते हैं। इसी स्थिति में **'शीलचन्द्र' एस.पी. साल्वेण्ट, ईस्टमैन ऐग्रो** के मज़दूर काम कर रहे हैं।

लालपुर स्थित 'ईस्टमैन ऐग्रो लि.' के मज़दूरों ने एक समय में (1988) लड़कर अपना एक यूनियन बना लिया था। यहां के मज़दूरों ने अपने जुझारू संघर्षों द्वारा तमाम आर्थिक सहूलियतें भी हासिल कर ली थी। जनवादी तौर-तरीकों और सही राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के अभाव में सीटू से सम्बद्ध यहां की यूनियन का चरित्र धीरे-धीरे बदलता गया और अन्ततः नेतृत्व की गड़बड़ियों से 1998 में इसका पंजीकरण समाप्त हो गया। फिर तो प्रबन्धतंत्र का दबाव बढ़ना निश्चित था। यहां का मालिक बड़े ही नाटकीय ढंग से मज़दूरों की एकता तोड़ने का काम करता रहा है। यहां टेबुल के नीचे से पैसा देकर मज़दूर आबादी को भ्रष्ट करने का भी वह काम करता रहा है।

इस कारखाने में पहले दो ब्वायलरों से दो प्लांटों में काम होता रहा है। 12-12 घण्टे की शिफ्ट ड्यूटी में खटते हुए (बगैर ओवर टाइम भत्ते के) यहां के मज़दूर अपना गुजर-बसर करते रहे हैं। लेकिन नया (बड़ा) ब्वायलर लगने से दोनों प्लांटों की आपूर्ति इस एक ब्वायलर से ही हो जा रही है, फिर मालिक को "फालतू" मज़दूर दिखलाई देने लगे हैं और वह दबाव बढ़ाने लगा है।

दूसरी तरफ सिक्योरिटी, सफाई, बागवानी जैसे विभागों को अब ठेकेदारी में सौंपकर ज़्यादा लूटने का काम हो रहा है। मालिक मज़दूरों के डी.ए. में भी डकैती डालता रहा है जिसके खिलाफ लोगों ने मुकदमें भी कर रखे हैं। इसी कारण यहां त्रिवर्षीय वेतन समझौते के तहत उसने वेतन वृद्धि करके डी.ए. के मुकदमें को खत्म करवाने का मनोवैज्ञानिक दबाव भी बना रहा है। यहां का मालिक भी नये श्रम कानून के लागू होने की प्रतीक्षा में है।

भरतिया ग्रुप के कारखाने ग्लाइको इण्डिया लि. (काशीपुर) में स्थिति यह है कि यहां डेढ़ सौ तो नियमित मज़दूर हैं लेकिन लगभग डेढ़ हजार ठेका मज़दूर मामूली दिहाड़ी पर 12-12 घण्टे खट रहे हैं। ठेकेदार महीनों तक मज़दूरों को पैसा लटकाये रहता है। यहां ऐसी व्यवस्था है कि नियमित श्रमिक तो अपना लन्च 'टिफिन बाक्स' में ले जा सकते हैं लेकिन ठेका श्रमिकों को इसकी भी इजाजत नहीं है। वे अपनी रोटी पालीथिन या अखबार में लपेटकर ही ले जा सकते हैं।

खटीमा फाइबर्स (खटीमा) में दो-दो, तीन-तीन माह तक मज़दूर बगैर वेतन के ही काम करने को मजबूर हैं। दो बार के जुझारू आन्दोलनों की असफलता से मालिकों के हौसले पहले से ही बढ़े हुए थे अब श्रम कानूनों में बदलाव से स्थिति और मज़दूर विरोधी हो गयी है। उनके वर्दी व जूते तक हस्ताक्षर करवाने के बावजूद नही दिये जाते हैं। यहां मज़दूर डरे और सहमे होने के बावजूद आक्रोश में हैं।

एच.एम.टी. (रानीबाग, नैनीताल) में 'स्वैच्छिक अवकाश योजना' के तहत जबरिया अवकाश योजना लागू हो रही है, छंटनी जारी है।

ए.एस.पी. (गज़रौला) में उपजिलाधिकारी और उपश्रमायुक्त की मध्यस्थता में चार माह पूर्व सम्पन्न समझौता आज तक लागू नहीं हुआ। प्रबन्धकों ने धोखे से आधे मज़दूरों को अन्दर कर लिया और आधे बाहर हैं। मज़दूरों का संघर्ष बाहर-भीतर दोनों जगह जारी है। प्रबन्धतंत्र वेतन समझौते की जगह पिछले संघर्षों से मिले कैण्टीन, वर्दी, जूता, डी.ए. आदि सहूलियतों को काटने, दो मोल्डर चलाने, उत्पादन बढ़ाने का दबाव बना रहा है। फिलहाल बाकी मज़दूरों की कार्य बहाली के लिये भीतर 'ठूल डाउन' आन्दोलन जारी है। आठ माह से वेतन के अभाव में मज़दूर भुखमरी के कगार पर पहुंचते जा रहे हैं।

मज़दूरों पर चौतरफा ऐसा ही कहर बरपा हो रहा है। ये हालात तो नये श्रम कानून के लागू होने के पहले के हैं जब मज़दूर विरोधी नया कानून लागू हो जाएगा तो क्या होगा, सहज अनुमान लगाया जा सकता है।

बिगुल यहां से प्राप्त करें

- शहीद पुस्तकालय, जनगण होम्यो सेवा सदन, **मर्यादपुर**, मऊ
- मौर्या बुक स्टाल, सआदतपुरा (निकट रोडवेज), मऊनाथभंजन, **मऊ**
- जनचेतना, जाफरा बाजार, **गोरखपुर**
- विजय इन्फारमेशन सेन्टर, कचहरी बस स्टेशन, **गोरखपुर**
- विश्वनाथ मिश्र, नेशनल पी.जी. कालेज, **बड़हलगंज**, गोरखपुर
- 69, बाबा का पुरवा (पुराना), पेपर मिल रोड, निशातगंज, **लखनऊ**
- जनचेतना स्टाल, काफी हाउस के पास, हजरतगंज, **लखनऊ**, (शाम 5 से 8-30)
- राहुल फाउण्डेशन, 69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, **लखनऊ**
- विमल कुमार, बुक स्टाल, निकट नीलगिरि काम्प्लेक्स, ए ब्लाक, इंदिरानगर, **लखनऊ**
- मदन पाल, दुकान नं. -28, नयी सब्जी मंडी, पुराने कपड़े का मार्केट, **रुद्रपुर** (ऊधमसिंह नगर)
- रामपाल सिंह, भारतीय जीवन बीमा निगम, आवास विकास, **रुद्रपुर** (ऊधमसिंहनगर)
- रवीन्द्र कुमार, भारतीय जीवन बीमा निगम, गाखा कार्यालय, पन्तनगर
- प्रोग्रेसिव बुक सेंटर, विश्वनाथ मंदिर गेट, बी.एच.यू. **वाराणसी**
- राजीव वर्मा द्वारा डा. जे. पी. वर्मा, बी.पी. 82, पटेलनगर, **मुगलसराय**, वाराणसी
- राजेन्द्र प्रसाद, रेणु मेडिकल की गली, मुख्य सड़क, **रेणुकूट**, सोनभद्र
- सत्यम वर्मा, 81, समाचार अपार्टमेंट, मयूर विहार-एक, नई **दिल्ली**
- ललित सती, एल.आई.सी., **फैज रोड शाख, दिल्ली**
- नई किरण पुस्तक भंडार, एफ-56, हरकेश नगर, ओखला, नई दिल्ली,
- पंकज कुमार, 256, मॉडल टाउन, सोनीपत, हरियाणा
- डी. के. सचान, कृषि विज्ञान केंद्र, विकास भवन, नई कलक्ट्रेट, **गाजियाबाद**
- सुनील कुमार सिंह, सेक्टर-12 बी, 3159, बोकारो इस्पातनगर, **बोकारो**
- गणपतलाल, ग्राम काजी रसूलपुर, पो. तेघड़ा, **बेगूसराय**
- पीपुल्स बुक हाउस, पटना कालेज के सामने, **पटना**
- समकालीन प्रकाशन (प्रा.) लि. पुस्तक बिक्री केन्द्र, आजाद मार्केट, पीरमुहानी, **पटना**
- विमर्श, 22, स्वास्तिक काम्प्लेक्स, रसल चौक, **जबलपुर**
- नरभिन्दर सिंह, द्वारा डा. सुखदेव हुन्दल, ग्रा/पो. सन्तनगर, जिला-सिरसा
- पंकज, प्लाट नं. 33, सेक्टर-15, सोनीपत (हरियाणा)
- सुखविंदर द्वारा को) दशरथ लाल, मकान नं. 14, लेबर कॉलोनी, गिल रोड, लुधियाना (पंजाब)
- राकेश गोरखा, सरस्वती पुस्तक मंदिर, प्रधान नगर, सिलीगुड़ी, **दार्जीलिंग**
- बुक मार्क, 6, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, **कलकत्ता**
- शर्मा बुक स्टाल, थाना रोड, चराली, तिनसुकिया
- *नेपाल*
- विश्व नेपाली पुस्तक सदन, श्रवनपथ, बुटवल, रुपनदेई, नेपाल
- विशाल पुस्तक सदन, बिजुवार बाजार, प्यूठान राप्ती अंचल
- विशाल पुस्तक पसल, अस्पताल लाइन, बुटवल, लुम्बिनी, नेपाल

नया श्रम कानून लागू होने से पहले ही मजदूरों पर दबाव बढ़ने लगा है

बिगुल संवाददाता

रुद्रपुर (ऊधमसिंह नगर)। अभी नया श्रम क़ानून दस्तावेजी रूप लेकर आया भी नहीं है कि नैनीताल की तराई में कारखानेदार मज़दूरों पर इसका दबाव बनाने (और यहां तक कि इसे लागू करने) भी लगे हैं। चाहे होण्डा पावर प्रोडक्ट्स जैसी बहुराष्ट्रीय कम्पनी हो या चाहे ग्लाइको इण्डिया, आनन्द निशिकावा, खाटीमा फाइबर्स, रामाविजन, तराई फूड, ईस्टमैन जैसे कारखाने हों, हर जगह मज़दूरों पर दबाव बढ़ता जा रहा है और प्रबन्धकों की बांछें खिलने लगी हैं।

रामाविजन लि. (किच्छा)। दमन-उत्पीड़न का प्रतीक बन चुके पिक्चर ट्यूब निर्माता इस कारखाने में प्रबन्धतंत्र का अपना ही क़ानून चलता है। विगत एक दशक के दौरान यहां के मज़दूर दो बार लम्बे संघर्षों से गुजर चुके हैं और प्रबन्धकों के बर्बर ताण्डवों को झेल चुके हैं। मामूली दिहाड़ी पर 12-12 घण्टे हाड़तोड़ मेहनत करवाने, सभी श्रम क़ानूनों को ताक पर रख देने और यूनियन बनाने के सभी प्रयासों को कुचलने में यहां के प्रबन्धकों की कुख्याति रही है।

यहीं यह भी गौरतलब है कि (प्रबन्धकों ने बड़े ही सुनियोजित तरीके से झूठी अफवाहें फैलाकर ऐसी परिस्थिति पैदा कर दी कि) विगत दो वर्ष के दौरान लगभग 70 प्रतिशत नियमित श्रमिक कारखाने को छोड़कर जा चुके हैं और 'ट्रायल' (कैजुअल या ठेका नहीं) नामक नयी व्यवस्था के तहत मज़दूरों को दोहन जारी है।

अब जबसे नये श्रम क़ानून की बात उठी है तो यहां के प्रबन्धकों की छाती और फूल गयी हैं। विगत जनवरी माह से ही यहां एक नयी व्यवस्था कायम है। पूरे एक माह में होने वाले 208 घंटे काम को लगातार 12-12 घंटे शिफ्ट ड्यूटी में महज 17-18 दिन में ही पूरा करवा लिया जाता है। इस दौरान किसी प्रकार की कोई छुट्टी नहीं, कोई ओवर टाइम नहीं। बाकी 12-13 दिन की छुट्टी (वह भी मालिकों की मर्जी पर!)। यदि किसी मज़दूर का रिलीवर नहीं आया तो फिर उसे लगातार 24 या 36 घंटे भी काम करना पड़ सकता है। छुट्टी भी ऐसे बेवक्त मिलती है जब महीने का अन्त हो (क्योंकि तनख्वाह तो 7 तारीख के बाद ही मिलता है)। ऊपर से मज़दूरों को मालिकों की धौंस अलग से सहनी पड़ती है।

जे.के.ड्रग्स लि. (गज़रौला)। यहां का प्रबन्धतंत्र तो जैसे श्रम क़ानूनों की प्रतीक्षा में ही बैठा रहा हो। इसने कुछ दिनों पूर्व अपने दो प्लांटों में से एक प्लांट बन्द करके कुछ मज़दूरों को दूसरी जगह स्थानान्तरित कर दिया था। बचे हुए तीस स्थायी मज़दूरों (जिनमें इसके खिलाफ विरोध का स्वर भी था) को विगत 14 अप्रैल को निकाल बाहर किया। अब यहां के मज़दूर मालिकों के खिलाफ संघर्षरत हैं।

होण्डा पावर प्रोडक्ट्स लि. (रुद्रपुर)। जनरेटर बनाने वाले इस जापानी कारखाने में मज़दूरों पर दबाव बनाने का नया हथकण्डा अपनाया जा रहा है। वैसे भी देश में 'हायर एण्ड फायर' वाले नये श्रम क़ानून को जल्द बनाने और लागू करने के लिए देशी मालिकों और विश्व साम्राज्यवादी महाप्रभुओं में जापानियों की हड़बड़ी और दबाव सबसे अधिक रहा है।

चूंकि होण्डा में एक मजबूत और जुझारू यूनियन है, इसलिये सीधे कोई हमला तो नहीं हो पा रहा है, लेकिन नये श्रम क़ानूनों की बाट जोह रहा यहां का प्रबन्धतंत्र चालें चल रहा है। सात माह पूर्व यूनियन अध्यक्ष सहित दो मज़दूरों के निष्कासन के बाद यहां का प्रबन्धक वर्ग बड़े ही शातिराना तरीके से क्षेत्रवाद की हवा खड़ा करने और कुछ दिग्भ्रमित मज़दूरों को मोहरा बनाकर यूनियन को कमजोर करने के लिए लगातार प्रयासरत है। पहले कारखाना स्थानान्तरित करने की हवा फैली, फिर उत्पादन लागत कम करने की बात चली। उधर अतिरिक्त उत्पादन के नाम पर फरवरी माह में तीन दिनों के लिये और मार्च में चार दिनों के लिये मज़दूरों को अवकाश दे दिया गया। मजेदार बात यह है कि एक तरफ तो यहां का प्रबन्धतंत्र अतिरिक्त उत्पादन का रोना रो रहा है, दूसरी तरफ वह यूनियन से 'ओवर टाइम' खोलने की बात कर रहा है, उत्पादकता बढ़ाने के लिये दबाव बना रहा है।

इसी दौरान वेल्डिंग शॉप से मफलर लाइन को ठेकेदारी में भेज दिया गया, प्रेस शॉप से डाई, टूल रूम से जीक फिक्शर, पेण्ट शॉप से कई कम्पोनेन्ट ठेके में दे दिये गये। विभागों से श्रमिकों के स्थानान्तरण की तैयारी चल रही है, कैजुअल मज़दूरों को ठेकेदारी में देने का प्रयास चल रहा है, ठेका मज़दूरों के भत्ते कम किये जा रहे हैं। कुछ विभागों में कैजुअल को 'ब्रेक' लगाया जा चुका है। अभी अधिकारियों को कैण्टीन व वाहन सुविधाओं से वंचित किया गया है (अगली गाज मज़दूरों पर ही गिरनी है)।

आनन्द निशिकावा लि. (रुद्रपुर)। यहां पर जो त्रिवर्षीय वेतन समझौता जून, 2000 में ही लागू हो जाना चाहिए था, वह समझौता ही अब तक नहीं हो सका है। मज़दूर यूनियन द्वारा प्रबन्धकों को मांगपत्रक सौंपे एक वर्ष से भी ज्यादा समय हो चुका है। प्रबन्धतंत्र द्वारा उत्पादकता बढ़ाने और एक मज़दूर द्वारा दो मोल्डिंग चलाने का दबाव लगातार डाला जा रहा है। यहां भी कारखाना शिफ्ट कर देने की धमकी कारखानेदार दे रहा है – कुछ मशीनें तो स्थानान्तरित भी की जा चुकी हैं लेकिन यूनियन के प्रतिरोध के कारण फिलहाल यह प्रक्रिया स्थगित हो गयी है। यहां भी प्रबन्धतंत्र नये श्रम क़ानून की प्रतीक्षा में है।

यहां मज़दूरों पर दबाव बढ़ाने के लिए कई मज़दूरों के विभागों में फेरबदल कर दिया गया – मेंटनेंस के लोगों को प्रोडक्शन में लगाने जैसा काम भी हुआ। उत्पादन न बढ़ाने के बहाने दो मज़दूरों को प्रबन्धकों ने निलम्बित कर दिया। फिलहाल यूनियन के प्रतिरोध के कारण इन मज़दूरों को तो काम पर वापस ले लिया गया लेकिन कारखाने में ऊहापोह की स्थिति बनी हुई है। उल्लेखनीय है कि 1999 में यहां हुए मज़दूर आन्दोलन के कमजोर होने और मालिक पक्ष के हावी होने से 40 प्रतिशत उत्पादन प्रबन्धतंत्र बढ़वा चुका है और साजिशाना तरीके से तत्कालीन यूनियन महामंत्री को निष्कासित किया जा चुका है।

तराई फूड लि. (रुद्रपुर)। छोटे मालिक तो और भी नंगे हो चुके हैं। इसका उदाहरण तराई फूड लि. है। यहां के प्रबन्धकों ने नये श्रम क़ानून का सीधे हवा खड़ा करके लगभग पचास मज़दूरों को कार्यमुक्त कर दिया। मज़दूरों पर तरह-तरह के झूठे आरोप मढ़े गये। यहां के मज़दूरों ने बताया कि प्रबन्धकों को उपश्रमायुक्त का भरपूर सहयोग प्राप्त था (वैसे भी श्रम विभाग मालिकों की सेवा में ही ज़्यादा तत्पर रहता है!)। एक निष्कासित मज़दूर के अनुसार उपश्रमायुक्त ने श्रमिकों को बहलाते-डराते हुए कहा कि नया श्रम क़ानून आ रहा है, इस्तीफा दे दो फायदे में रहोगे। अब ये मज़दूर सड़क पर आ गये हैं। वैसे भी यहां के मालिकान कारखाने को कई बार बेचने-खरीदने की नौटंकी कर चुके हैं और इस बहाने काफी सरकारी सब्सिडी डकारने के साथ ही धोखा-धड़ी करके मज़दूरों के पैसे पर भी डाका डाल चुके हैं।

ईस्टमैन ऐग्रो एवं साल्वेंट लि. (लालपुर)। तराई के साल्वेंट-ऐग्रो-राइस मिलों में मज़दूरों की स्थिति और भी दमनकारी रही है। यहां ज्यादातर कारखानों में यूनियनें नहीं हैं और मज़दूरों को मामूली दिहाड़ी पर 12-12 घण्टे जमकर खटाया जाता है। यदि रिलीवर न आ सका तो मज़दूरों को 36 घण्टे की भी ड्यूटी करनी पड़ती है। किसी मज़दूर को हल्की सी झपकी भी आने पर गेट बाहर कर दिया जाता है।

अब, उदारीकरण के इस दौर में उन्नत तकनोलॉजी और बड़ी पूंजी वाले कारखानों के सामने प्रतियोगिता में टिके रहने के लिए यहां के छोटे

(पेज 2 पर जारी)

मुनाफे की वेदी पर मजदूरों की बलि

बागडिगी और चैतूडीह खान दुर्घटना के बाद से एक लाख चालीस हजार खान मज़दूर दहशत में जी रहे हैं। यह संख्या तो केवल सेण्ट्रल जोन के एक सौ नौ कोयला खदानों में काम करने वाले मज़दूरों की है। देश भर की खदानों में काम कर रहे मज़दूरों में बागडिगी से पैदा हुए भय का अन्दाजा लगाया जा सकता है। बागडिगी में 37 मज़दूरों की जानें चली गईं, लेकिन खानों के सुरक्षा इंतजामात अभी वहीं हैं। अलबत्ता न्यायिक जांच की घोषणा और निलम्बन की सरकारी खानापूर्ति की जा चुकी है।

कोयलांचल की खदानों में भूगर्भीय आग, गैस रिसाव, भू-धसान की घटनाएं आये दिन होती हैं। खान मज़दूर जब धरती के अन्दर खदान में प्रवेश करता है तो उसे नहीं पता होता कि वापस जिन्दा घर लौट पायेगा या नहीं। कोयला खदानों से कोयला निकालना मनुष्य ने सैकड़ों वर्ष पूर्व सीख लिया था। तबसे विज्ञान ने कई ऊंचाइयां हासिल की हैं, लेकिन खदानों में काम करने की स्थितियों में कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं आये। जो बदलाव हुए भी तो सिर्फ इस मायने में कि कैसे अधिक से अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। खदान के भीतर काम करते हुए एक इंसान की ज़िन्दगी कैसे सुरक्षित रहे, इसके लिए प्रयास करने की जैसे ज़रूरत ही न समझी गयी।

एक मज़दूर की जान की कीमत ही क्या है? बागडिगी से यह सवाल फिर उठ खड़ा हुआ है। बागडिगी और चैतूडीह में कोई खान मंत्री, कोई खान मंत्रालय का नौकरशाह, कोई भारत कोकिंग कोल लि. का महानिदेशक या कोई खान मालिक नहीं मरा। वहां तो मरने वाले ज्यादातर ग़रीब खान मज़दूर थे, इसीलिये वह महज एक खान दुर्घटना थी, जैसी खान दुर्घटनाओं में पिछले चार-पांच दशक में केवल धनबाद क्षेत्र में करीब एक हजार मज़दूर मारे गये। बागडिगी कोयला खदान के जलमग्न हो जाने के बाद निराशा में डूबी एक खनिक की पत्नी को दिल का दौरा पड़ गया, एक अन्य खनिक की पत्नी ने जहर खाकर अपनी ज़िन्दगी समाप्त कर ली। उस मज़दूर की पत्नी की मौत और सैंतीस परिवारों की चीख-पुकार सत्ता के गलियारों में गूंज रहे सत्ता मदांध राक्षसी अट्टहासों को नहीं बेध सकी। लेकिन बागडिगी से उठा यह सवाल कि मुनाफाखोरों के इस राज में एक मज़दूर की जान की कीमत ही क्या है, पूरे देश की मज़दूर बिरादरी में फैल गया।

बागडिगी ने एक बार फिर यह साबित किया है कि मौतों का भी अपना एक वर्ग चरित्र होता है। इस पूंजीवादी समाज में, एक मज़दूर की मौत एक गुलाम की मौत होती है, बढ़ती जनसंख्या पर एक रोक होती है, एक दुर्घटना होती है, उस मौत का जिम्मेदार उस मज़दूर के पिछले जन्मों का कर्मफल होता है। नेता, नौकरशाह, पूंजीपति की या किसी अमीरज़ादे की मौत समाज के लिये "अपूरणीय क्षति" होती है। उसकी मौत के कारणों की तलाश की जाती है, दोषियों को दण्ड दिया जाता है। पूंजीवादी मीडिया भी इसी रूप में तस्वीर को जनता के सामने पेश करता है। लेकिन इस मानवद्रोही व्यवस्था के पैरोकारों की लाख कोशिशों के बावजूद सच्चाई को छुपाना असंभव हो रहा है। संसद में बैठकर जो भी घोषणाएं हों, पूंजीवादी मीडिया जो भी छापे, कारखानों-खेतों-खदानों में काम कर रहा मज़दूर जानता है बागडिगी और चैतूडीह में मज़दूरों की हत्यायें हुई हैं।

बागडिगी जैसे हत्याकांडों की सुनवाई पूंजीवादी न्यायपालिका में नहीं होती है। यह न्यायपालिका तो खुद उसी पूंजीवादी व्यवस्था की रखवाली के लिये बनी है, जिसमें बागडिगी और चैतूडीह जैसे कांड आये दिन होते हैं। तो फिर बागडिगी क्या कुछ दिनों में सिर्फ एक स्मृति बनकर रह जायेगा? कोई भी मुकदमा नहीं चलेगा? अपराधी को सजा नहीं होगी? इन प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिये इतिहास की मदद लें तो यही जवाब मिलेगा – मुकदमें को 'क्लोज' नहीं किया जा सकता है, इसको चलाना ही पड़ेगा। अपराधियों को माफ नहीं किया जा सकता। इस असंवेदनशील और मानवद्वेषी व्यवस्था को जितनी जल्दी खत्म कर दिया जाय, उतना ही अच्छा है।

ललित

दयानन्द मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल के कर्मचारियों का आन्दोलन

एकजुट संघर्ष ने मैनेजमेंट को झुकाया

(बिगुल संवाददाता)

लुधियाना। स्थानीय दयानन्द मेडिकल कालेज एवं अस्पताल के कर्मचारियों ने पिछले दिनों अपने एकताबद्ध संघर्ष द्वारा एक महत्वपूर्ण जीत हासिल की। कर्मचारियों की एकजुटता के आगे दयानन्द मेडिकल कालेज (डी.एम.सी.) प्रबन्धन को झुकना पड़ा तथा कर्मचारियों की मांगें मानने को मजबूर होना पड़ा। डी.एम.सी. इम्प्लाइज यूनियन के नेतृत्व में लड़ी गई यह लड़ाई देश भर में चल रहे उन संघर्षों का ही एक हिस्सा है जो मज़दूर विरोधी नीतियों के खिलाफ हो रहे हैं।

डी.एम.सी. इम्प्लाइज यूनियन पिछले काफी समय से कर्मचारियों की जायज मांगें मनवाने के लिये प्रयासरत थी, जिनमें प्रमोशन में इंटरव्यू की पूर्वशर्त खत्म करने तथा सीनियरटी लिस्ट जारी करने जैसी मांगें मुख्य थीं। इन मांगों को लेकर मैनेजमेण्ट तथा यूनियन के बीच बातचीत के कई दौर भी चले, लेकिन इसका कोई नतीजा न निकला, उल्टे प्रबन्धकीय सोसायटी के सचिव ने अहंकारपूर्ण लहजे में धमकी दे डाली कि वे हड़ताल का सामना करने को तैयार हैं। मजबूरन, डी.एम.सी. इम्प्लाइज यूनियन ने मैनेजमेंट के अड़ियल रुख के खिलाफ 22 दिसम्बर को काम बन्द करने का फैसला लिया। इस दिन काम बन्द करके कर्मचारियों ने मेडिकल सुपरिटेन्डेन्ट तथा प्रिंसिपल का घेराव किया। आखिरकार रात 9 बजे पुलिस-प्रशासन की दखल से दोनों पक्षों के बीच एक लिखित समझौता हुआ।

मैनेजमेंट तथा यूनियन के बीच 22 दिसम्बर को हुए इस समझौते के अनुसार किसी भी कर्मचारी का उत्पीड़न न करने तथा दोनों मांगों (इंटरव्यू की शर्त खत्म करने तथा सीनियरटी लिस्ट जारी करने) का निपटारा 30 दिसम्बर तक कर देने का निर्णय लिया गया। इसी बीच, गुजरात के भूकम्प पीड़ितों को राहत पहुंचाने के नाम पर, मैनेजमेंट ने कर्मचारियों की तनख्वाह में 10 प्रतिशत कटौती करने का फरमान जारी कर दिया। इस फरमान का विरोध करते हुए यूनियन ने राहत स्वयं इकट्ठा करने का फैसला किया तथा उसने जबरन राहत वसूली के स्थान पर कर्मचारियों से राहत कोष में अधिकाधिक योगदान करने का आह्वान किया। यूनियन के इस कदम का उसके सक्रिय सदस्यों ने ही नहीं बल्कि मैनेजमेंट के प्रभाव वाले कर्मचारियों ने भी जबरदस्त समर्थन किया तथा राहत कोष में योगदान किया। इस घटना से मैनेजमेण्ट बौखला गई और उसने यूनियन को सबक सिखाने की ठान ली।

मैनेजमेंट ने मौका देखकर यूनियन पर प्रहार किया। उसने यूनियन के प्रधान चन्द्र मोहन कालिया तथा तीन अन्य यूनियन पदाधिकारियों को

(पेज 2 पर जारी)

विशेष सामग्री

अध्याय - 2 (पिछले अंक से जारी)

पार्टी की बुनियादी समझदारी

पार्टी की मार्गदर्शक विचारधारा की हिफाजत के लिए संघर्ष करो

मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्से-तुङ विचारधारा हमारी पार्टी के कर्मों का मार्गदर्शक है

एक क्रांतिकारी पार्टी के बिना मजदूर वर्ग क्रांति को कतई अंजाम नहीं दे सकता। लेनिन ने इस बात को बार-बार जोर देकर कहा था। स्तालिन और माओ ने भी बराबर इस बात पर जोर दिया और बीसवीं सदी की सभी सफल सर्वहारा क्रान्तियों ने भी इसे सत्यापित किया।

लेनिन ने सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी के सांगठनिक उसूलों का निर्धारण किया और इस फौलादी सांचे में बोल्शेविक पार्टी को ढाला। चीन की पार्टी भी बोल्शेविक पार्टी की ही उत्तराधिकारी थी। सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान, समाजवादी समाज में वर्ग-संघर्ष का संचालन करते हुए माओ के नेतृत्व में चीन की पार्टी ने अन्य युगान्तर कारी सैद्धान्तिक उपलब्धियों के साथ-साथ लेनिनवादी सांगठनिक सिद्धान्तों को भी और आगे विकसित किया।

सोवियत संघ और चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के लिए बुर्जुआ तत्वों ने सबसे पहले यही जरूरी समझा कि सर्वहारा वर्ग की पार्टी का चरित्र बदल दिया जाये. हमारे देश में भी संसदीय रास्ते की अनुगामी नामधारी कम्युनिस्ट पार्टियों मौजूद हैं। भारतीय मजदूर क्रांति को सफल बनाने के लिए भारत में भी सर्वहारा वर्ग की एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी खड़ी करने का काम सर्वोपरि है।

इसके लिए बेहद जरूरी है कि मजदूर वर्ग यह जाने कि असली और नकली कम्युनिस्ट पार्टी में क्या फर्क होता है और एक क्रान्तिकारी पार्टी खड़ी करने का काम सर्वोपरि है।

इसी उद्देश्य से, फरवरी, 2001 अंक से हमने एक बेहद जरूरी किताब 'पार्टी की बुनियादी समझदारी' के अध्यायों का किश्तों में प्रकाशन शुरू किया है। इस अंक में चौथी किश्त दी जा रही है। यह किताब सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पार्टी-कतारों और युवा पीढ़ी को शिक्षित करने के लिए तैयार की गयी श्रृंखला की एक कड़ी थी. चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की दसवीं कांग्रेस (1973) में पार्टी के गतिशील क्रान्तिकारी चरित्र को बनाये रखने के प्रश्न पर अहम सैद्धान्तिक चर्चा हुई थी, पार्टी का नया संविधाान पारित किया गया था और संविधान पर एक महत्वपूर्ण रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। इसी नई रोशनी में यह पुस्तक एक सम्पादकमण्डल द्वारा तैयार की गयी थी। मार्च, 1974 में पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, शंघाई से इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की 4,74,000 प्रतियां छपीं। यह पुस्तक पहले चीनी भाषा से फ्रांसीसी भाषा में अनूदित हुई और 1976 में प्रकाशित हुई। फिर नार्मन बेथ्यून इंस्टीच्यूट, टोरण्टो (कनाडा) ने इसका फ्रांसीसी से अंग्रेजी में अनुवाद कराया और 1976 में ही इसे प्रकाशित भी कर दिया। प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद मूल पुस्तक के इसी अंग्रेजी संस्करण से किया गया है।

- सम्पादक

(चौथी किश्त)

अध्यक्ष माओ ने पार्टी के विचारधारात्मक स्तर पर निर्माण के काम को हमेशा से अत्यधिक महत्व दिया है, मार्क्सवाद-लेनिनवाद के उपकरण से हमारी पार्टी का निर्माण करने तथा उसको इससे लैस करने के लिए वे हमेशा दृढ़संकल्प रहे हैं। हमारी पार्टी के जीवन के शुरुआती दिनों में भी, अध्यक्ष माओ का ज़ोर रहता था कि इतिहास की भौतिकवादी दृष्टि ही इसका सैद्धान्तिक आधार होना चाहिए। 1929 में जब अध्यक्ष माओ ने **पार्टी में ग़लत विचारों को सुधारने के बारे में** नामक लेख लिखा तो उन्होंने पार्टी सदस्यों को सही राजनीतिक लाइन पर शिक्षित करने, तमाम ग़ैर-सर्वहारा विचारों को शिकस्त देने के लिए सर्वहारा विचारधारा का इस्तेमाल करने और हमारी पार्टी तथा हमारी सेना के निर्माण में मार्क्सवाद-लेनिनवाद का इस्तेमाल करने की ज़रूरत पर ज़ोर दिया। पार्टी के भीतर दो लाइनों के बीच के संघर्ष के ऐतिहासिक अनुभवों का, विचारधारात्मक और सैद्धान्तिक स्तर पर, व्यवस्थित ढंग से समाहार करने, समूची पार्टी के मार्क्सवादी-लेनिनवादी स्तर को ऊपर उठाने तथा इसकी कतारों में छन तू श्यू, वाङ मिङ और अन्य अवसरवादियों की लाइनों के घातक प्रभाव को समाप्त करने के उद्देश्य से, 1937, 1941 और 1942 में, अध्यक्ष माओ ने **व्यवहार के बारे में, अन्तरविरोध के बारे में, अपने अध्ययन में सुधार करो, पार्टी की कार्यशैली में सुधार करो, घिसे-पिटे पार्टी-लेखन का विरोध करो, येनान की कला-साहित्य गोष्ठी में भाषण** और अन्य महत्वपूण कृतियों की रचना की, तथा, साथ ही, येनान में दोष निवारण आन्दोलन का व्यक्तिगत तौर पर निर्देशन किया। मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्से-तुङ विचारधारा और द्वंद्वात्मक एवं ऐतिहासिक भौतिकवाद के अध्ययन के जरिए, समूची पार्टी ने "वाम" और दक्षिणपंथी अवसरवादी लाइनों के स्रोत तथा उनकी मार्क्सवाद-लेनिनवाद विरोधी सारवस्तु को निरावृत करने का काम किया तथा इस तरह, पार्टी की मार्क्सवाद-लेनिनवाद की समझदारी के स्तर को जबर्दस्त रूप से ऊंचा उठाया।। मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्से-तुङ विचारधारा के आधार पर, सभी पार्टी कामरेडों ने एकता का नया स्तर हासिल किया तथा जापान-विरोधी युद्ध तथा मुक्ति-युद्ध के लिए ठोस बुनियाद डालने का काम किया। समाजवादी क्रान्ति की अवधि के दौरान, अध्यक्ष माओ ने, सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के अन्तर्गत वर्ग-संघर्ष के नियमों और अभिलाक्षणिकताओं के अनुरूप, समाजवाद की ऐतिहासिक अवधि के लिए बुनियादी लाइन का सुविस्तृत प्रतिपादन किया तथा समाजवाद की अवधि में पार्टी के निर्माण से सम्बन्धित सवालों की श्रृंखला का सही ढंग से समाधान किया। इस अवधि के दौरान, पार्टी-निर्माण से संबंधित बुनियादी कार्यभार ये हैं कि मार्क्सवाद पर अमल किया जाये न कि संशोधनवाद पर, तथा संशोधनवाद की आलोचना का बीड़ा उठाया जाये। नवीं केन्द्रीय कमेटी के दूसरे प्लेनरी सत्र के बाद, लिन प्याओ की आलोचना करने और कार्यशैली को दोषमुक्त करने के आन्दोलन का अध्यक्ष माओ ने स्वयं नेतृत्व किया तथा विचारधारा और राजनीतिक लाइन के मोर्चों पर एक शैक्षिक कार्यक्रम में समूची पार्टी की अगुवाई की। लिन प्याओ पार्टी-विरोध ी गुट की आलोचना और भर्त्सना के जरिए हमारी पार्टी ने अपना शुद्धीकरण किया है और स्वयं को मजबूत बनाया है। आधी शताब्दी से भी अधिक समय के दौरान, चीनी क्रान्ति के व्यवहार ने यह दिखलाया है कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद- माओ त्से-तुङ विचारधारा से लैस तथा दो लाइनों के संघर्ष के माध्यम से विकसित और सुदृढ़ीकृत चीनी कम्युनिस्ट पार्टी समूची चीनी जनता का नेतृत्वकारी केन्द्रक है – कि यह महान, गौरवशाली और सही पार्टी है।

वह मूलभूत मानदण्ड जो हमें एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी को किसी संसोधनवादी पार्टी से अलग पहचानने में सक्षम बनाता है, यह है कि उक्त पार्टी मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्से-तुङ विचारधारा को अपने चिन्तन का मार्गदर्शन करने वाला सैद्धान्तिक आधार बनाने पर दृढ़ है या नहीं। इस मुद्दे पर हमारी पार्टी में दो लाइनों का संघर्ष हमेशा से बहुत तीखा रहा है।

हमारी पार्टी के इतिहास में जब-जब कोई अवसरवादी लाइन उभरी है, उस लाइन के नेताओं की मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रत्ती भर भी समझ नहीं रही है और चीनी क्रान्ति के सिद्धान्त और व्यवहार से वे सर्वथा अनभिज्ञ रहे हैं। समय-समय पर वे मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बारे में बोलते रहे हैं, लेकिन कभी भी उसके अनुसार आचरण नहीं करते रहे हैं; वे हमेशा ही मार्क्सवाद-लेनिनवाद विरोधी रहे हैं। पार्टी की बुनियादी लाइन को बदल देने, सर्वहारा अधिनायकत्व को उखाड़ फेंकने और पूंजीवाद की पुनर्स्थापना कर देने के उद्देश्य से लिन प्याओ और ल्यू शाओ-ची ने पार्टी के चिन्तन के सैद्धान्तिक आधार को बदल देने तथा मार्क्सवाद-लेनिनवाद की जगह संशोधनवाद को स्थापित कर देने की हर तरह से कोशिशें कीं। उन्होंने हमारी पार्टी और इसके सदस्यों को भ्रष्ट करने के उद्देश्य से प्रागनुभववाद, बुर्जुआ मानवतावाद, उत्पादक शक्तियों की प्राथमिकता के सिद्धान्त, वर्ग-संघर्ष के समाप्त हो जाने का सिद्धान्त आदि ... तरह-तरह-के प्रतिक्रियावादी विचारों का पूरी ताकत लगाकर प्रचार करने की कोशिश की। "आत्मविकास" विषयक अपनी कुख्यात पुस्तक में मज़दूर वर्ग के गद्दार और विश्वासघाती ल्यू शाओ-ची ने बेशर्मी के साथ "कन्फ्यूशियस और मेंशियस के रास्ते" का उपदेश दिया। बुर्जुआ कैरियरवादी, षडयंत्रकारी, कपटी प्रतिक्रान्तिकारी और देश के गद्दार लिन प्याओ ने भी जोर-शोर से कन्फ्यूशियस और मेंशियस की प्रशंसा की थी और प्रतिक्रान्तिकारी पुनर्स्थापना के अपने कुचक्र में सहायक बनने के लिए इतिहास के इन प्रेतों का आवाहन किया था। लिन प्याओ का यह भी मानना था कि कम्युनिस्ट पार्टी को अपने परचम के शीर्ष पर "उत्पादन" शब्द अंकित कर देना चाहिए और आर्थिक प्रश्नों को हल करने को प्राथमिकता देनी चाहिए। नवीं कांग्रेस के पहले, लिन प्याओ और चेन पो-ता गुट इस हद तक आगे चला गया कि उसने एक रिपोर्ट तैयार की जिसमें उत्पादक शक्तियों की प्राथमिकता का उपदेश दिया गया था तथा सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के अन्तर्गत क्रान्ति के जारी रहने का विरोध किया गया था। यह उम्मीद करते हुए कि हमारी पार्टी वर्ग-संघर्ष को तिलांजलि दे देगी और सर्वहारा क्रान्ति तथा सर्वहारा अधिनायकत्व का परित्याग कर देगी, इस गुट ने इस बात की वक़ालत की कि नवीं कांग्रेस के बाद उत्पादन को विकसित करना मुख्य कार्यभार हेना चाहिए। स्पष्ट है कि यदि वे प्रतिक्रियावादी भ्रामक धारणाएं, जिन्हें वे फैला रहे थे, पार्टी की मार्गदर्शक विचारधारा बन गई होतीं, तो यह एक सर्वहारा पार्टी नहीं रह जाती, बल्कि एक बुर्जुआ पार्टी, एक संशोधनवादी पार्टी बन जाती। पार्टी के चिन्तन के मार्गदर्शक आधार को समाप्त कर देने की छुपी हुई नीयत से ल्यू शाओ-ची और लिन प्याओ ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद- माओ त्से-तुङ विचारधारा का विरोध करने की और उसे पैरों तले रौंद देने की कोशिश की। या तो उन्होंने माओ त्से-तुङ विचारधारा को महत्वहीन दिखलाने की हरचन्द कोशिशें कीं और सभी कार्यकर्ताओं एवं जनसमुदाय द्वारा अध्यक्ष माओ की रचनाओं के अध्ययन का विरोध किया, या फिर उन्होंने यह दावा किया कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी रचनाएं "पुरानी पड़ चुकी हैं", तथा "हमसे काफी दूर हैं"। मार्क्सवाद-लेनिनवाद को बदनाम करने के उद्देश्य से उन्होंने ऐसी ही और भी तमाम बेतुके दावे किये। संक्षेप में, वे इस बात के विरोधी थे कि मार्क्सवाद- लेनिनवाद-माओ त्से-तुङ विचारधारा हमारी पार्टी की मार्गदर्शक विचारधारा बनी रहे। वे चाहते थे कि हमारी पार्टी सही रास्ता छोड़ दे और स्वयं को उनकी संशोधनवादी लाइन का उपकरण बना दे। इसलिए, उनका उद्देश्य अत्यधिक ख़तरनाक था।

पार्टी की मार्गदर्शक विचारधारा के प्रश्न पर दो लाइनों के बीच के संघर्ष के पीछे यह महान प्रश्न है कि पार्टी का निर्माण मार्क्सवाद-लेनिनवाद माओ त्से-तुङ विचारधारा के आधार पर होने जा रहा है और इसका विकास सर्वहारा वर्ग के हरावल के रूप में किया जाना है, या इसे संशोधनवाद के जरिए भ्रष्ट कर दिया जाना है और बुर्जुआ वर्ग एवं भूस्वामी वर्ग की अभिलाक्षणिकताओं से लैस कर दिया जाना है। सवाल यह है कि हमारी पार्टी अपनी प्रकृति बदलेगी या नहीं। और यह है कि क्रान्ति सफल होगी अथवा असफल होगी। पार्टी के हर सदस्य को इस संघर्ष के महत्व और इसकी दीर्घकालिक प्रकृति को पूरी तरह से समझना होगा, और मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्से-तुङ विचारधारा की हिफाजत के जुझारू कार्यभार के लिए अपना जीवन समर्पित करना होगा। पार्टी के प्रत्येक सदस्य को अध्यक्ष माओ के इस आह्वान पर अमल करना चाहिए: "गम्भीरता से पढ़ो और अध्ययन करो और मार्क्सवाद पर अपनी पकड़ मज़बूत बनाओ।" उसे द्वंद्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद को मजबूती से पकड़ना होगा, प्रत्ययवाद (आदर्शवाद) और अधिभूतवाद (आधिभौतिकी) का विरोध करना होगा और अपने विश्व-दृष्टिकोण को सचेतन तौर पर फिर से सांचे में ढालना होगा। उसे बुनियादी मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों को गहराई से समझने में सक्षम होना होगा तथा एक ओर मार्क्सवाद और दूसरी ओर नये-पुराने संशोधनवाद एवं सभी तरह के अवसरवाद के बीच संघर्ष के इतिहास से वाक़िफ होना होगा। साथ ही, उसे इस बात की अच्छी समझदारी कायम करनी होगी कि अध्यक्ष माओ ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सार्वभौमिक सत्य को क्रान्ति के ठोस व्यवहार से कैसे जोड़ा, और इस तरह, कैसे उन्होंने मार्क्सवाद की विरासत हासिल की, उसकी हिफाजत की और उसे विकसित किया। कम्युनिस्ट पार्टी के प्रत्येक सदस्य को लिन प्याओ की आलोचना करने और पार्टी की कार्यशैली में सुधार करने के आन्दोलन में सक्रिय रूप से संलग्न रहना जारी रखना होगा, संशोधनवाद की और बुर्जुआ विश्व-दृष्टिकोण की आलोचना करनी होगी, असली मार्क्सवाद को नकली मार्क्सवाद से फरक करने की अपनी क्षमता को संघर्षों के ज़रिए मजबूत बनाना होगा और पार्टी की मार्गदर्शक विचारधारा की हिफाजत के लिए निर्मम अनवरत संघर्ष हेतु अपनी मानसिकता तैयार करनी होगी।

(अगले अंक से नया अध्याय: पार्टी का बुनियादी कार्यक्रम और अन्तिम लक्ष्य)

इण्डिया पेस्टीसाइड्स लि., लखनऊ में मज़दूरों की छंटनी से उठे कुछ सवाल

क्या केन्द्रीय बजट का मज़दूर-विरोधी सिफारिशें पूंजीपतियों को पहले से ही पता थीं?

वित्तमंत्री यशवंत सिन्हा ने जिस दिन अपने बजट भाषण में 1000 से कम मज़दूरों वाले कारखानों के मालिकों को 'हायर एण्ड फायर' का पूरा अधिकार देने की घोषणा की, उसके ठीक दो दिनों पहले 'इण्डिया पेस्टीसाइड्स लि.', लखनऊ से दस मज़दूरों की छंटनी कर दी गई। कुछ ही दिनों बाद इसी फर्म की दूसरी इकाई से भी दस मज़दूरों की छंटनी कर दी गई।

छंटनी के लिए मालिकान ने एकदम मनमाना तरीका अपनाया। प्रबंधक ने मज़दूरों को बुलाकर उनसे मौखिक रूप से कह दिया कि अब कम्पनी को उनकी सेवाओं की ज़रूरत नहीं है, अत: महीने के अंत में वे अपना हिसाब कर लें। अगले दिन इन मज़दूरों को फैक्ट्री गेट पर ही भीतर घुसने से रोक दिया गया। मालिकों ने अनुपयोगी निर्जीव पुर्जों की तरह इन मज़दूरों को बाहर निकाल फेंका और कानून अथवा जनतंत्र का कोई अभिकर्ता या प्रावधान इनकी मदद नहीं कर सका। स्थिति यह थी कि मालिकों के आतंक से भीतर काम करने वाले मज़दूर भी छंटनीशुदा मज़दूरों से मिलने बाहर नहीं आये।

इन दोनों कारख़ानों में सौ-सौ से अधिक स्थायी मज़दूर और लगभग इतने ही अस्थायी मज़दूर काम करते थे। पुराने नियमों के अनुसार 100 से अधिक मज़दूरों वाले कारखानों में छंटनी प्रतिबंधित था। सिर्फ 100 से कम मज़दूरों वाले कारखानों में ही छंटनी की जा सकती थी और उसके लिए भी उचित मुआवजे का प्राविधान था। बजट के नये प्राविधान 1 अप्रैल' 2001 से लागू होते, इसके पहले इन प्राविधानों का इस्तेमाल गैरक़ानूनी है। लेकिन इस सरकार ने पूंजीपतियों का मन इतना बढ़ा दिया है कि इन्होंने 1 अप्रैल तक इंतजार करना भी ठीक नहीं समझा। बजट भाषण के दो दिन पहले से ही ये छंटनी की कार्रवाई में जुट गये। इससे इनको यह फायदा मिला कि छंटनी किए गये मज़दूरों को पुराने रेट से मुआवजा देना पड़ा। इस अंधेरगर्दी के खिलाफ मज़दूर न्यायालय या श्रम न्यायालय की मदद भी नहीं ले सकते थे क्योंकि 1 अप्रैल से नये क़ानून लागू होने थे और कोर्ट-वकील की फीस में पूरा मुआवजा भी खत्म हो जाता।

इन छोटे-छोटे कारखानों में, जिनकी संख्या पूरे देश में लाखों में है और जिनमें हर प्रकार की उपभोक्ता सामग्री तैयार होती है, कार्य की सबसे अमानवीय और गैरक़ानूनी परिस्थितियां होती हैं। यहां पर श्रम शक्ति की सबसे निर्मम लूट होती है। 12-12 घंटे का कार्यदिवस, स्वास्थ्य, चिकित्सा, सफाई, मनोरंजन, कैंटीन आदि की कोई व्यवस्था नहीं होती। छुट्टियों का कोई नियम नहीं चलता। मज़दूरों को लम्बे समय तक स्थायी नहीं किया जाता, स्थायीकरण के बाद अस्थायी रूप में की गई सेवा को पूरी सेवा में नहीं जोड़ा जाता। भविष्य निधि और पेंशन मद में पूंजीपति अपना अंश नहीं देते। कभी भी इन्हें समय से वेतन नहीं मिलता। जिस कार्य के लिए भरती की जाती है उससे भिन्न, तरह-तरह के काम लिये जाते हैं। सैकड़ों तरीकों से ये छोटे पूंजीपति मज़दूरों के अधिकारों को छीनकर अपना मुनाफा अर्जित करते हैं। इसके साथ ही, सरकार द्वारा समय-समय पर दी जाने वाली टैक्स छूट और सब्सिडी को भी पूरा हड़पते रहते हैं।

1 अप्रैल' 2001 से लागू हो रही नयी आयात-निर्यात नीति के कारण, इन छोटे उद्योगों को बाज़ार की कड़ी प्रतियोगिता में टिके रहने के लिए अपने माल का उत्पादन-खर्च कम करना है। इसके लिए "हायर एण्ड फायर" का नियम पूंजीपतियों के लिए सबसे अधिक उपयोगी होता है ताकि मज़दूरों से बंधुआ-मज़दूर की तरह काम लिया जा सके। विश्वव्यापी मंदी और भूमण्डलीकरण के इस दौर में पूंजीपति वर्ग अपने संकटों से बचने के लिए पूरे मज़दूर वर्ग को गुलाम बनाने की कोशिश कर रहा है ताकि उसकी श्रम-शक्ति को अंतिम हद तक निचोड़ा जा सके। नये क़ानून उसकी इसी घातक योजना के हिस्से हैं।

नये क़ानून की हद में देश का 90 प्रतिशत मज़दूर आ गया है। यदि एक कारखाने से आनन-फानन में 20 मज़दूर निकाल दिये गये तो पूरे देश के इस तरह के लाखों कारखानों से

(पेज 10 पर जारी)

जुआ-शराब...जाति-धरम...
किस्मत-करम...
चुनाव से बदलाव का भरम...
बस दुअन्नी-चवन्नी के
लिए रिरियाने वाले
ट्रेड यूनियनवाद में उलझे रहना..

यह सब क्या है?

मज़दूर साथियो!

रोज-रोज तुम अपनी ही कब्र खोदते रहोगे तो पूंजीवाद की कब्र कौन खोदेगा?

(पृष्ठ 12 से आगे)

यह एक गाथा...

नेता पेरिस में जमा हुए जिसमें विभिन्न राष्ट्रों के एक के बाद दूसरे नेता ने भाषण दिया। ये लोग बास्तीय' की मुक्ति की एकसौंवी जयन्ती मनाने आये थे।

आखिर में अमरीकनों के बोलने की बारी आयी। जो मज़दूरा हमारे मज़दूर वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहा था, खड़ा हुआ और बिल्कुल सरल भाषा में, बिना किसी घुमाव-फिराव के उसने आठ घंटे के कार्य-दिवस के लिए संघर्ष की कहानी सुनायी, जिसका चरम बिन्दु 1886 में हे मार्केट का शर्मनाक काण्ड था।

उसने हिंसा, खूरैजी, बहादुरी का जो सजीव चित्र पेश किया, उसे सम्मेलन में आये प्रतिनिधि वर्षों तक नहीं भूले। उसने बताया कि पार्सन्स ने कैसे मृत्यु का वरण किया था, जबकि उससे कहा गया था कि अगर वह अपने साथियों से अपने को अलग कर ले और क्षमा मांगे तो उसे फांसी नहीं दी जायेगी। वक्ता ने श्रोताओं को बताया कि कैसे दस आयरिश खान मज़दूरों को पेनसिल्वानिया में इसलिए फांसी दी गयी थी कि उन्होंने मज़दूरों के संगठित होने के अधिकार के लिए लड़ाई की थी। उसने उन असल लड़ाइयों के बारे में बताया, जिनमें मज़दूर हथियारबंद "पिंकरटनों" से लड़े थे। और उसने और बहुत कुछ बताया। जब उसने अपना भाषण समाप्त किया तो पेरिस कांग्रेस ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया:

" कांग्रेस फैसला करती है कि राज्यों के अधिकारियों से कार्य-दिवस को कानूनी ढंग से घटाकर आठ घंटे का करने की मांग करने के लिए और साथ ही पेरिस कांग्रेस के अन्य निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिए समस्त देशों और नगरों से मेहनतकश अवाम एक निर्धारित दिन एक महान अन्तरराष्ट्रीय प्रदर्शन संगठित करेंगे। चूंकि अमेरिकन फेडरेशन आफ लेबर (अमरीकी मज़दूर संघ) पहली मई 1890 को ऐसा ही प्रदर्शन करने का फैसला कर चुका है, "अत: यह दिन अन्तरराष्ट्रीय प्रदर्शन के लिए स्वीकार किया जाता है। विभिन्न देशों के मज़दूरों को प्रत्येक देश में विद्यमान परिस्थितियों के अनुसार यह प्रदर्शन अवश्य आयोजित करना चाहिए।"

तो इस निश्चय पर मंजूरी की मुहर लगा दी गयी। "मई दिवस" पूरे संसार की धरोहर बन गया। अच्छी चीजें किसी एक जनता या राष्ट्र की सम्पत्ति नहीं होती। एकके बाद दूसरे देश के मज़दूर ज्यों-ज्यों मई दिवस को अपने जीवन, अपने संघर्षों, अपनी आशाओं का अविभाज्य अंग बनाते गये, वे यह एक स्वयंसिद्ध तथ्य मानने लगे कि यह उनका अपना दिन है ङ और यह सही भी है क्योंकि पृथ्वी पर मौजूद समस्त जातियों, राष्ट्रों के बीच हमारी अपनी अलग ही हस्ती है, हम समस्त जनगण और संस्कृतियों का समुच्चय है।

और आज का मई दिवस?

पिछले मई दिवस गत आधी शताब्दी के संघर्षों को प्रकाश-स्तम्भों की भांति आलोकित करते हैं। इस शताब्दी के आरम्भ में मई दिवस के ही दिन मज़दूर वर्ग ने पहले तो परायी धरती को हड़पने की साम्राज्यवादी कार्रवाइयों की सबसे पहले भर्त्सना की थी। मई दिवस के ही अवसर पर मज़दूरों ने नवजात समाजवादी राज्य ङ सोवियत संघ – का समर्थन करने के लिए आवाज बुलंद की थीं मई दिवस के अवसर पर ही हमने अपनी भरपूर शक्ति से असंगठितों के संगठन का समारोह मनाया था। लेकिन बीते किसी भी मई दिवस पर कभी ऐसे अनिष्टसूचक लेकिन साथ ही इतने आशा भरे भविष्य के साथ हमारा आमना-सामना नहीं हुआ था, जितना आज मई दिवस पर हो रहा है। पहले कभी इतना कुछ जीतने के लिए हमारे पास नहीं था, पहले कभी इतना कुछ खोने के लिए हमारे पास नहीं था।

जनता के लिए अपनी बात कह पाना आसान नहीं है। लोगों के पास अखबार या मंच नहीं है। और न ही सरकार चलाने वालों में हमारे द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों की बहुसंख्या है। रेडियो जनता का नहीं है और न फिल्में बनाने वाली मशीनरी उसकी है। धनकुबेरों की इजारेदारी नियंत्रण की नकेल को कसकर थामे हुए है, बहुत अच्छी तरह कसकर थामे हुए है। लेकिन जनता पर तो किसी की इजारेदारी नही है।

जनता की ताकत उसकी अपनी ताकत है। मई दिवस उसका अपना दिवस है, अपनी यह ताकत प्रदर्शित करने का दिवस है। कदम से कदम मिलाकर बढ़ते लाखों लोगों की कतारों के बीच अलग से एक आवाज बुलंद हो रही है। यह वक्त है कि वे लोग, जो अमरीका को फासिज्म के हवाले करने पर आमादा हैं, इस आवाज का सुनें।

उन्हें यह बताने का वक्त है कि वास्तविक मज़दूरी लगभग पचास प्रतिशत घट गयी है, कि घरों में अनाज क कनस्तर खाली हैं, कि यहां अमरीका में अधिकाधिक लोग भूख की चपेट में आ रहे हैं। यह वक्त है श्रम विरोधी क़ानूनों के खिलाफ आवाज बुलन्द करने का। दो सौ से ज्यादा श्रम विरोधी कानूनों के विधेयक, ऐसे विधेयक कांग्रेस के समक्ष विचाराधीन आ रहे हैं, जो यकीनन मजदूरों को उसी तरह तोड़ डालने के रास्ते खोल देंगे, जिस तरह हिटलर के नाजीवाद ने जर्मन मजदूरों को तोड़ डाला था.

संगठित अमरीकी मजदूरों के लिए आंख खोलकर यह तथ्य देखने का वक्त आ गया है कि यह मजदूरों की एकता कायम करने की आखिरी घड़ी है वरना बहुत विलम्ब हो जायेगा और एकताबद्ध करने के लिए संगठित मजदूर रहेंगे ही नहीं।

आप यहां पढ़ रहे हैं गाथा, उन लोगों की जो बारह से पन्द्रह घंटे रोज काम करते थे, आप पढ़ रहे हैं गाथा, उस सरकार की, जो आतंक और निषेधाज्ञाओं के बल पर चल रही है।

यह है उन लोगों का लक्ष्य, जो आज श्रमिकों को चकनाचूर करना चाहते हैं। वे अपने "अच्छे" दिनों को फिर वापस लाना चाहते हैं। इसका सबूत युनाइटेड माइन के खनिक मजदूरों के मामले में सुप्रीम कोर्ट का फैसला है। आप जब मई दिवस के अवसर पर मार्च करेंगे तो आप उन्हें अपना जवाब देंगे।

वक्त आ गया है यह समझने का कि "अमरीकी साम्राज्य" के आह्वान का, यूनान, तुर्की और चीन में हस्तक्षेप से क्या रिश्ता है। साम्राज्य की कीमत क्या है? जो दुनिया पर राज कर दुनिया को "बचाने" के लिए चीख रहे हैं, उन्हें दूसरे साम्राज्यों के अंजाम को याद करना चाहिए। वे जिंदगी और धान दोनों अर्थों में युद्ध की कीमत आंकें।

वक्त आ गया है यह देखने के लिए जाग उठने का कि कम्युनिस्टों के पीछे शिकारी कुत्ते छोड़ें जाने का क्या अर्थ है? क्या एक भी ऐसा कोई देश है, जहां कम्युनिस्ट पार्टी को गैर कानूनी घोषित किया जाना फासिज्म की पूर्वपीठिका न रहा हो? क्या ऐसा कोई एक भी देश है, जहां कम्युनिस्टों को रास्ते से हटाते ही मजदूर यूनियनों को चकनाचूर न कर दिया गया हो?

वक्त आ गया है कि हम हालात की कीमत को समझें। कम्युनिस्टों को यंत्रणा देने के अभियान की कीमत संगठित मजदूरों को ठिकाने लगाना था- उसकी कीमत है फासिज्म। और आज ऐसा कौन है, जो इस बात को स्वीकार नहीं करेगा कि फासिज्म की कीमत मौत है?

लगभग एक सौ साल से संगठित मजदूर शक्ति अमरीकी प्रजातंत्र की रीढ़ की हड्डी रही है। आज शैतानी और अमंगलकारी शक्तियां इस बात के लिए कृतसंकल्प हैं कि संगठित श्रम को नष्ट कर दिया जाये।

मई दिवस इस देश के समस्त स्वतंत्रता प्रिय नागरिकों के लिए प्रतिगामियों को उत्तर देने का वक्त है। मार्च करते जा रहे लाखों लाख लोगों की एक ही आवाज बुलंद हो रही है- मई दिवस प्रदर्शन में हमारे साथ आइये और मौत के सौदागरों को अपना जवाब दीजिए।

अनुवादक - सुरेन्द्र कुमार

1. गैटलिंग मशीनगन, जो चक्कर काटती बेलनदार नलियों के एक पूरे समूह से सज्जित होती है और अविराम गति से गोले दागती रहती है। – अनु.

2. पेरिस का एक दुर्ग, जिसमें राजनीतिक बंदी रखे जाते थे। 14 जुलाई 1789 को इस दुर्ग पर जनता के हमले के साथ ही फांसीसी क्रांति शुरू हुई थी। – अनु.

भारतीय सर्वहारा की प्रथम राजनीतिक हड़ताल

1908 में बाल गंगाधर तिलक को अपने समाचार पत्र में प्रकाशित एक लेख के लिए छ: वर्ष कारावास की सजा मिली। तिलक की गिरफ्तारी पर बम्बई के कपड़ा मजदूरों ने आम हड़ताल की। यह भारतीय सर्वहारा की पहली राजनीतिक कार्रवाई थी। लेनिन ने जो उन दिनों जेनेवा में निर्वासित थे, इसे लक्षित किया और निम्नलिखित शब्दों में उसका अभिनन्दन किया:

"भारतीय जनवादी तिलक को अंग्रेज सियारों ने जो कुख्यात सजा दी है- उन्हें लम्बे काल के लिए निर्वासन की सजा दी गयी थी, जिसके संबंध में पिछले दिनों ब्रिटेन की हाउस आफ कामन्स में पूछे गये प्रश्न ने यह तथ्य उजागर किया है कि भारतीय जूरियों ने उन्हें रिहा करने की घोषणा की पर सजा ब्रिटिश जूरियों के वोट से दी गयी है! - धनवानों के जूते चाटने वालों ने एक जनवादी के खिलाफ जो यह बदला लिया उसकी वजह से बम्बई में सड़कों पर प्रदर्शन हुए और हड़तालें हुईं। भारत में भी सर्वहारा सचेत राजनीतिक जनसंघर्ष तक विकसित हो चुका है और यदि यही मामला रहा तो भारत में रूसी तरीके के ब्रिटिश शासन का विनाश निश्चित है।"

जनमुक्ति की अमर गाथा: चीनी क्रान्ति की सचित्र कथा (भाग-चौदह)

महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति और गहरी, और व्यापक, और फैसलाकुन होती चली गयी!

(1)

वर्ष 1968 की शुरुआत "एक में तीन" क्रान्तिकारी कमेटियों के फैलाव से हुई। "एक में तीन" कमेटियों में क्रान्तिकारी कार्यकर्ता, सेना के प्रतिनिधि और जन सभाओं द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि शामिल होते थे। इन क्रान्तिकारी कमेटियों को पेरिस कम्यून के दौरान स्थापित कम्यूनों के मॉडल पर कायम किया गया था। सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पेरिस कम्यून के मॉडल का व्यापक रूप में प्रचार किया गया था और इस बात पर जोर दिया गया था कि पूंजीवादी पुनर्स्थापना को रोकने का बुनियादी कारगर उपाय शासन और निर्णय की प्रक्रिया में जनता की प्रत्यक्ष भागीदारी को ज्यादा से ज्यादा बढ़ाकर सर्वहारा राज्य के आधारों को विस्तारित किया जाना चाहिए। सत्ता के एक नये अंग के तौर पर

सांस्कृतिक क्रान्ति समर्थक क्रान्तिकारी छात्रों का जुलूस

ताचाई कम्यून में बाढ़ नियंत्रण कार्य, सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान का एक पोस्टर

क्रान्तिकारी कमेटियों ने तत्काल ही काम करना शुरू कर दिया। "सांस्कृतिक क्रान्ति के नये दौर की इस नई पहल के लिए सभी उद्यमों, विश्वविद्यालयों और सरकारी तंत्र में जमीन तैयार थी। अप्रैल 1968 तक माओ के इर्द-गिर्द के सर्वहारा हेडक्वार्टरों ने 27 में से 23 क्षेत्रीय सरकारों में सत्ता पर कब्जा कर लिया। क्रान्तिकारी कमेटियों और नये सर्वहारा हेडक्वार्टरों ने "नैतिक प्रोत्साहन और जन लामबंदी" से अर्थव्यवस्था के संचालन का प्रयास किया। "क्रान्ति पर पकड़ बनाये रखो और उत्पादन को आगे बढ़ाओ" का सफल अमली रूप सामने आया। पूरे देश में

"एक में तीन" क्रान्तिकारी कमेटी की एक मीटिंग

समाजवादी उत्पादन के नये-नये उपक्रम सामने आये और उत्पादन की रफ्तार और विकास दर में चमत्कारी वृद्धि ने पूरी दुनिया को विस्मय से भर दिया।

मज़दूरों के लिए अध्ययन कक्षाएं कारखानों के जीवन का अविभाजित हिस्सा बन गईं। पार्टी-नौकरशाहों के विशेषाधिकार प्राप्त गुटों, प्रबंधकों, तकनीकविदों और "शैक्षिक तानाशाहों" का तख़्ता पलट देना इस दौर की सांस्कृतिक क्रान्ति की सर्वप्रमुख विशेषता थी।।

(2)

जुलाई, 1968 में सांस्कृतिक क्रान्ति का मुख्य जोर शिक्षा के क्षेत्र में केन्द्रित रहा। माओ ने कहा, "यह आवश्यक है कि स्कूल जाने की अवधि कम की जाये। शिक्षा का क्रान्तिकारीकरण करो, सर्वहारा की राजनीति को नियंत्रण में रखो और मज़दूरों से तकनीशियनों को प्रशिक्षित करने का शंघाई टूल प्लाण्ट का रास्ता अपनाओ। व्यावहारिक अनुभव वाले किसानों और मज़दूरों के बीच से छात्रों का चुनाव करना चाहिए और वे कुछेक साल के बाद उत्पादन में वापस लौटेंगे।"

माओ के दिशा-निर्देशों पर अमल करते हुए स्कूलों-कॉलेजों-विश्वविद्यालयों के द्वार, पहली बार, आम किसानों-मज़दूरों के लिए खोल दिये गये। शिक्षा को सीधे व्यवहार और सामाजिक उपयोगिता से जोड़ा गया और दर्शन जैसे विषयों को जीवन से जुड़कर आम जन के लिए रहस्य नहीं रह गये। शिक्षा संस्थानों से नौकरशाही की पकड़ समाप्त हो गई और नया समाजवादी जनतांत्रिक ढांचा कायम किया गया। दूसरी ओर लाखों छात्र शहरों के कालेजों-विश्वविद्यालयों से निकलकर एक साल या उससे भी अधिक समय के लिए कम्यूनों के खेतों और कारखानों में काम करने चले गये और कुछ तो वहीं स्थायी रूप से रह गये। पहली बार, शारीरिक और मानसिक श्रम, शहर और गांव तथा कृषि और उद्योग के बीच के अंतरों को पाटने और बुर्जुआ अधिकारों को समाप्त करने की दिशा में इतना व्यापक और महान सामाजिक प्रयोग अमल में आया था।

1968 के उत्तरार्द्ध में "संघर्ष-आलोचना-रूपान्तरण" का आन्दोलन शुरू करने का तथा राजनीतिक ढांचे और उत्पादन के प्रशासन में मज़दूर वर्ग की बढ़ती भूमिका का अहम फैसलाकुन दौर शुरू हुआ। "संघर्ष-आलोचना- रूपान्तरण" आन्दोलन का लक्ष्य दो स्तरों पर केन्द्रित था। पहला, "स्व के विरुद्ध संघर्ष करो और संशोधन

(शेष 8 पर जारी)

पीकिङ की एक जनसभा में पूंजीवादी पथगामियों की आलोचना करते 'रेड गार्ड्स'

माओ के उद्धरणों की 'लाल किताब' हाथों में लहराते छात्रों की टोली

सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पूंजीवादी पथगामियों की आलोचना, एक पोस्टर, 1968

जनमुक्ति की अमर गाथा: चीनी क्रान्ति की सचित्र कथा (भाग-चौदह)

महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति और गहरी, और व्यापक, और फैसलाकुन होती चली गयी!

पार्टी के भीतर क्रान्तिकारियों के समर्थन में शंघाई के मज़दूरों का जुलूस

(पृष्ठ 7 से आगे)

वाद को उखाड़ फेंको" – इस दिशा-निर्देशक नारे को लागू करने के लिए अध्ययन कक्षाओं को एक तरीके के रूप में अमल में लाना। दूसरा, 1968 की शुरुआत में माओ द्वारा जारी निर्देश – "राज्य के अंगों के पुन:संस्कार में सबसे बुनियादी सिद्धान्त यह है कि वे अवश्य ही जनता के सम्पर्क में रहेंगे" तथा उनके पहले के निर्देश – "क्रान्ति पर पकड़ बनाये रखो और उत्पादन को आगे बढ़ाओ" का पालन सुनिश्चित करना था। वास्तव में "संघर्ष- आलोचना- रूपान्तरण" के आन्दोलन का लक्ष्य सोलह-सूत्री सर्कुलर में रेखांकित मुख्य उद्देश्यों को लागू करना था, यानी, समाज के ऊपरी ढांचे के उन सभी अंगों का रूपान्तरण करना था "जो समाजवादी आर्थिक आधार के अनुरूप नहीं थे" तथा पूंजीवादी रुखों और झुकावों को नियंत्रित कर आर्थिक आधार का सुदृढ़ीकरण करना था।

(3)

1968 में दसियों लाख लोग प्रान्तीय अधिकारियों, कारखानों के निदेशकों, तकनीकविदों, "शैक्षिक तानाशाहों", पूंजीवादी बुद्धिजीवियों और पार्टी के भीतर के संशोधनवादियों का तख़्ता पलटने में शामिल थे। सांस्कृतिक क्रान्ति अब ऊपरी ढांचे से अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में तथा आर्थिक व्यवस्था के संगठन से निर्मित राजनीतिक सत्ता के दायरे में पहुंचकर केन्द्रित हो चुकी थी। कारखानों में नीति- निर्धारण और प्रबंधन का काम प्रबंधकों और तकनीकविदों के हाथों से मज़दूरों की कमेटियों के अधिकार में आ चुका था।

सांस्कृतिक क्रान्ति के इस महान युगान्तरकारी संघर्ष के दौरान, बेनक़ाब हो चुके क्रान्ति-विरोधियों के साथ ही कुछ मध्यमार्गी ढुलमुल धड़े और "अतिवाम" के आवरण में मूलत: दक्षिणपंथी अन्तर्वस्तु वाला एक कैरियरवादी गुट भी मौजूद था। वर्ग-संघर्ष के जटिल और कठिन दौर में, मुंह से सांस्कृतिक क्रान्ति की हिमायत करती हुई ये ताकतें मौक़ा देखकर विध्वंसक कार्रवाइयां करती रहती थीं। मध्यमार्गी उदारवादियों के धड़े के एक प्रमुख नेता स्वयं चाऊ एन-लाई थे, जिन्हें माओ का पुराना सहयोगी होने का सम्मान हासिल था लेकिन दक्षिणपंथी गिरोह के प्रति उनका रुख हमेशा ही उदारतावादी रहा, जिसने निर्णायक दौरों में वर्ग-शक्ति-संतुलन को क्रान्ति के प्रतिकूल बनाने में अहम भूमिका निभाई। एक दूसरा कैरियरवादी षडयंत्रकारी गुट लिन प्याओ और छन पो-ता का था जो अतिवामपंथी जनोत्तेजक लफ़्फाजी करते हुए वस्तुत: खुद सत्ता हासिल करना चाहता था और फिर सांस्कृतिक क्रान्ति को आगे बढ़ने से रोक देना चाहता था। माओ के नेतृत्व वाली सर्वहारा शक्तियों को मुख्य विरोधियों के साथ संघर्ष करते हुए, इस या उस धड़े को समय-समय पर साथ भी लेना पड़ा और इस मजबूरी के कुछ नकारात्मक नतीजे भी सामने आये।

(4)

सत्ता को अधिकार में ले लेने की अंतिम घटना 7 सितंबर, 1968 को घटी और अक्टूबर, 1968 में आठवीं केन्द्रीय कमेटी के बारहवें पूर्ण अधिवेशन ने इस बात की आधिकारिक तौर पर पुष्टि की कि ल्यू शाओ-ची छिपा हुआ गद्दार, पार्टी-ध्वंसक और अग्रणी पूंजीवादी पथगामी था जिससे सभी कार्य और पद छीन लिये गये हैं तथा उसे पार्टी से निकाल दिया गया है। इस मौके का लाभ उठाकर सांस्कृतिक क्रान्ति का जोर-शोर से समर्थन करते हुए, पार्टी और सेना में अपने समर्थकों की लामबंदी करके लिन प्याओ पार्टी उपाध्यक्ष के पद पर काबिज हो जाने और स्वयं को माओ का उत्तराधिकारी तक घोषित करवा लेने में सफल रहा।

(अगले अंक में जारी)

एक माओवादी पोस्टर, पीकिङ, 1967

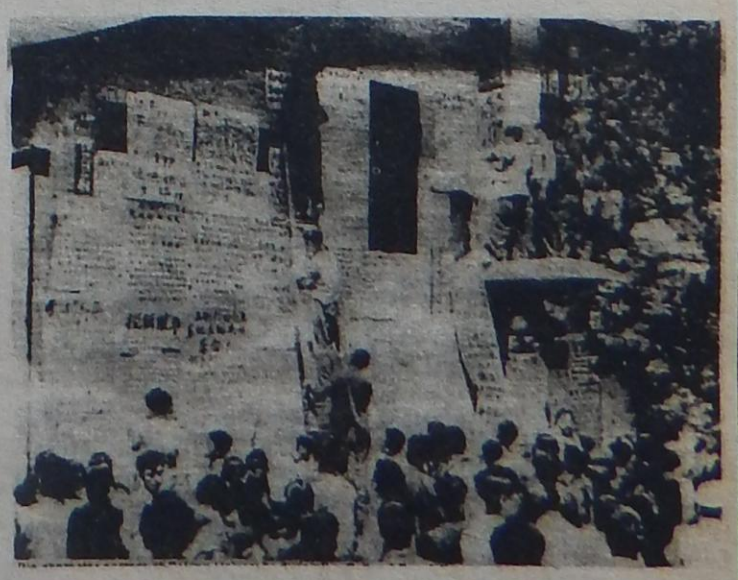

पीकिङ विश्वविद्यालय में 'बिग कैरेक्टर पोस्टर' लगाते छात्र

मज़दूर वर्ग के महान नेता और शिक्षक

कार्ल मार्क्स

के जन्मदिन (पांच मई) के अवसर पर

"...पूंजीपति वर्ग ने ऐसे हथियारों को ही नहीं गढ़ा है जो उसका अन्त कर देंगे, बल्कि उसने ऐसे आदमियों को भी पैदा किया है जो इन हथियारों का इस्तेमाल करेंगे – आज के मज़दूर, आज का सर्वहारा वर्ग।

जिस अनुपात में पूंजीपति वर्ग का, अर्थात पूंजी का विकास होता है, उसी अनुपात में सर्वहारा वर्ग का, आधुनिक मज़दूरों के एक वर्ग का होता है जो तभी तक जिन्दा रह सकते हैं जब तक उन्हें काम मिलता जाये, और उन्हें काम तभी तक मिलता है, जब तक उनका श्रम पूंजी में वृद्धि करता है। ये मज़दूर जो अपने को अलग-अलग बेचने के लिये लाचार हैं, अन्य व्यापारिक माल की तरह खुद भी माल हैं, और इसलिए वे होड़ के हर उतार-चढ़ाव तथा बाज़ार की हर तेज़ी-मन्दी के शिकार होते हैं।

मशीनों के विस्तृत इस्तेमाल तथा श्रम-विभाजन के कारण सर्वहाराओं के काम का वैयक्तिक चरित्र नष्ट हो गया है, और इसलिए यह काम उनके लिए आकर्षक नहीं रह गया है। मज़दूर मशीन का पुछल्ला बन जाता है और उससे सबसे सरल, नीरस और आसानी से प्राप्त योग्यता की मांग की जाती है। इसलिए मज़दूर के "उत्पादन" पर खर्च लगभग पूर्णत: उसके जीवन-निर्वाह और वंश वृद्धि के लिए आवश्यक साधनों तक सीमित रह गया है। लेकिन हर माल का, और इसलिए श्रम का भी दाम उसके उत्पादन में लगे हुए खर्च के बराबर होता है। अत: जिस अनुपात में काम की अरुचिकरता में वृद्धि होती है, उसी अनुपात में मज़दूरी घटती है। यही नहीं, जिस मात्रा में मशीनों का इस्तेमाल तथा श्रम का विभाजन बढ़ता है उसी मात्रा में श्रम का बोझ भी बढ़ता जाता है, चाहे यह काम के घंटे बढ़ाने के जरिये हो या निर्धारित समय में मज़दूरों से अधिक काम लेने या मशीन की रफ्तार बढ़ाने आदि के जरिये।

आधुनिक उद्योग ने पितृसत्तात्मक उस्ताद के छोटे-से वर्कशाप को औद्योगिक पूंजीपति के विशाल कारखाने में बदल दिया है। कारखाने में भरे झुंड के झुंड मज़दूर सैनिकों की तरह संगठित किये जाते हैं। औद्योगिक फौज के सिपाहियों की तरह वे बाकायदा एक दरजावार तरतीब में बंटे हुए अफसरों और साजटों की कमान में रखे जाते हैं। वे केवल पूंजीपति वर्ग और पूंजीवादी राज्य के ही गुलाम नहीं हैं; बल्कि हर दिन, हर घंटे वे मशीन के, ओवरसियर के, और सर्वोपरि खुद कारखानेदार पूंजीपति के गुलाम होते हैं। यह तानाशाही जितनी ही अधिक खुलकर यह घोषित करती है कि मुनाफा ही उसका लक्ष्य और उद्देश्य है, उतनी ही अधिक वह तुच्छ, घृणित और कटु होती है।

('कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा पत्र' से लिया गया एक अंश)

मई दिवस : इतिहास के पन्नों पर

मेहनतक़श वर्ग के चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न

"मेहनतक़श साथियो! मई दिवस आ रहा है। वह दिन, जब तमाम देशों के मेहनतक़श वर्ग चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न मनाते हैं, इन्सान के हाथों इन्सान के शोषण और दमन के खिलाफ अपनी संघर्षशील एकजुटता का इजहार करते हैं, करोड़ों मेहनतक़शों को भूख, ग़रीबी और जिल्लत की ज़िन्दगी से आज़ाद कराने की प्रतिज्ञा करते हैं। इस महान संघर्ष में दो दुनियाएं रूबरू खड़ी हैं – सरमाये की दुनिया और मेहनत की दुनिया, शोषण तथा गुलामी की दुनिया।

एक तरफ खड़े हैं खून चूसने वाले मुट्ठी भर अमीरो-उमरा, उन्होंने फैक्ट्रियां और मिलें, औजार और मशीनें हथिया रखी हैं, उन्होंने करोड़ों एकड़ जमीन और दौलत के पहाड़ों को अपनी निजी जायदाद बना लिया है, उन्होंने सरकार और फौज को अपना खिदमतगार बना लिया है, लूट-खसोट से इकट्ठा की हुई अपनी दौलत की रखवाली करने वाला वफादार कुत्ता। दूसरी तरफ खड़े है उनकी लूट के शिकार करोड़ों ग़रीब। वे मेहनत मज़दूरी के लिए लिए भी उन धन्ना सेठों के सामने हाथ फैलाने पर मजबूर हैं। उनकी मेहनत के बल से ही सारी दौलत पैदा होती है लेकिन रोटी के एक टुकड़े के लिए उन्हें तमाम उम्र एड़ियां रगड़नी पड़ती

हैं। काम पाने के लिए भी गिड़गिड़ाना पड़ता है, कमर तोड़ श्रम में अपने खून की आखिरी बूंद तक झोंक देने के बाद भी ज़िन्दगी भूखे पेट गुजारनी पड़ती है। गांव की अंधेरी कोठरियों और शहरों की सड़ती, गन्दी बस्तियों में।

लेकिन अब उन ग़रीब मेहनतक़शों ने दौलतमंदों और शोषकों के खिलाफ जंग का ऐलान कर दिया है। तमाम देशों के मज़दूर श्रम को पैसे की गुलामी, ग़रीबी और अभाव से मुक्त कराने के लिए लड़ रहे हैं जिसमें साझी मेहनत से पैदा हुई दौलत से मुट्ठी भर अमीरों को नहीं बल्कि सब मेहनत करने वालों को फायदा होगा। वे जमीन, फैक्ट्रियों, मिलों और मशीनों को तमाम मेहनतक़शों की साझी मिल्कियत बनाना चाहते हैं। वे अमीर-ग़रीब के अन्तर को खत्म करना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि मेहनत का फल मेहनतक़श को ही मिले, इन्सानी दिमाग की हर उपज, काम करने के तरीकों में आया हर सुधार मेहनत करने वालों के जीवन स्तर में सुधार लाये, उसके दमन का साधन न बने।

सरमाये के खिलाफ श्रम के भीषण संघर्ष में सब देशों के मज़दूरों को अनेक कुर्बानियां देनी पड़ी हैं। बेहतर जीवन और वास्तविक आज़ादी के अधिकार के लिए लड़ते हुए उनके खून के दरिया बहे हैं। जो मज़दूरों के हित में लड़ते हैं उन्हें हुकूमतों के बर्बर अत्याचार झेलने पड़ते हैं, लेकिन इतने जुल्मो-सितम के बावजूद दुनिया भर के मज़दूरों की एकता बढ़ रही है और वे लगातार, कदम-ब-कदम सरमायेदार शोषक वर्ग पर सम्पूर्ण विजय की ओर बढ़ रहे हैं।"

(रूसी क्रान्ति के महान नेता लेनिन ने 1904 में मई दिवस के अवसर पर यह पर्चा लिखा था)

मई दिवस अमर रहे!

"पिछली शताब्दी में ही पूरी दुनिया के मज़दूरों ने पहली मई को अपने खास त्योहार की तरह मनाने का फैसला कर लिया था। यह बात है पहली मई, 1886 की – जिस दिन प्रकृति सर्दियों की नींद से जागती है, जंगल और पहाड़ हरा चोला ओढ़ते हैं और मैदान और चरागाहें फूलों से अपना श्रृंगार करती है, सूरज पूरी धरती पर हल्की-हल्की गर्मी बरसाता है, नई जिन्दगी की खुशी हवाओं में फैल जाती है और प्रकृति नाचने और खुशियां मनाने लगती है – ठीक इसी दिन, यानी पहली मई को, समाजवादियों की पेरिस कांग्रेस में दुनिया भर के मज़दूरों ने सरेआम, बुलंद आवाज़ में यह ऐलान किया कि मज़दूर पूरी मानव जाति के लिए बसन्त ला रहे हैं, पूंजीवाद की बेड़ियों से मुक्ति का संदेशा ला रहे हैं, अब मज़दूरों ने पूरी दुनिया को आज़ादी और समाजवाद के आधार पर नये सिरे से रचने की ठानी है।

"हर वर्ग के अपने खास त्योहार होते हैं। राजे-रजवाड़ों ने अपने त्योहार बनाये जिन पर वे किसानों को लूटने के अपने "जन्मसिद्ध अधिकार" की घोषणा करते हैं। सरमायेदारों के अपने त्योहार होते हैं जिन पर वे मज़दूरों का शोषण करने के अपने "अधिकार" को दोहराते हैं। धर्माधिकारियों के भी अपने त्योहार होते हैं जिन पर वे वर्तमान व्यवस्था के गुणगान करते हैं, जिस व्यवस्था में मेहनतक़श बेकार और भूखे मरते हैं।

"मज़दूर भी अपना त्योहार मनायेंगे जिस पर वे सबके लिए काम, आज़ादी और समानता का ऐलान करेंगे। वह त्योहार है पहली मई का त्योहार।

"1889 में मज़दूरों ने यही प्रण लिया था।

"तबसे मज़दूरों के समाजवाद का जंगी नारा जुलूसों और जलसों में तेज से तेजतर होता गया है। मज़दूर आन्दोलन का सागर बढ़ता ही जा रहा है। नये देशों, नये राज्यों में यूरोप और अमरीका से एशिया, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया तक। कुछ दशकों के छोटे से समय में ही उस कमजोर सी लगने वाली अन्तरराष्ट्रीय मज़दूर गोष्ठी ने एक ऐसे बलवान, अन्तरराष्ट्रीय एकजुटता वाले संगठन का रूप धारण कर लिया है जो नियमित कांग्रेस करता है और दुनिया के हर भाग में मज़दूरों को एकत्रित करता है। सर्वहारा के आक्रोश के समुद्र में गगनचुम्बी लहरें उठ रही हैं और वह लगातार पूंजीवाद के डगमगाते किले की तरफ बढ़ रहा है। ...

"हम दौलत के पुजारी नहीं हैं। हमें सरमायेदारों और जालिमों की सल्तनत नहीं चाहिए। हम पूंजीवाद और उससे जन्मी खौफनाक ग़रीबी और खून-खराबे का विनाश चाहते हैं। मजदूर राज ज़िदाबाद! समाजवाद जिन्दाबाद!"

" ... इस दिन तमाम देशों के वर्ग-सचेतन मज़दूर यही घोषणा करते हैं। अंतिम जीत में विश्वास से भरे, शांति और मजबूती के साथ, वे सीना ताने अपनी मंजिल की तरफ बढ़े चले जा रहे हैं, शानदार समाजवाद की ओर, कदम-कदम पर कार्ल मार्क्स की इस घोषणा को अमल में लाते हुए: 'दुनिया के मज़दूरों, एक हो'!"

(दुनिया के पहले मज़दूर राज के मजबूत नेता और महान क्रान्तिकारी स्तालिन द्वारा 1912 में लिखे पर्चे से)

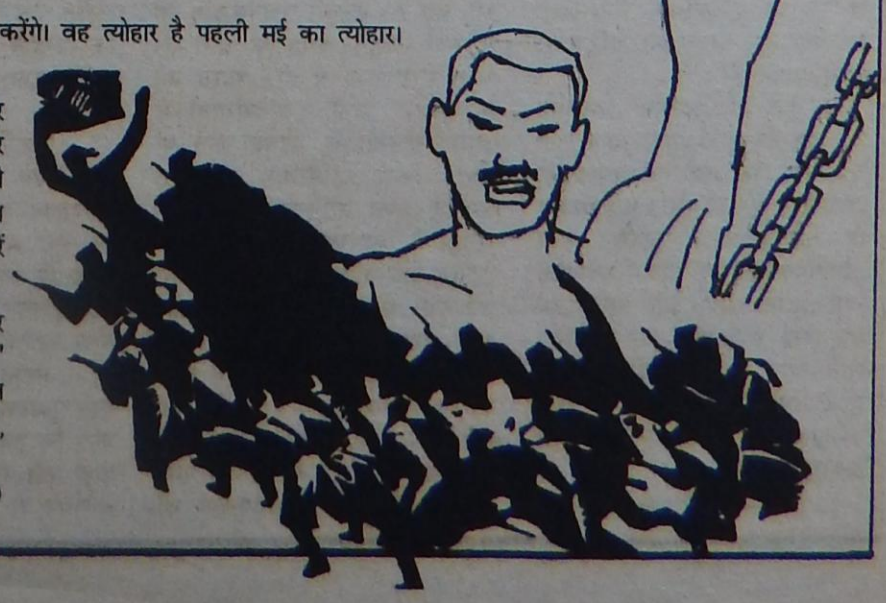

(पृष्ठ 1 से आगे)

क्रान्तिकारी वारिसों को यह जिम्मेदारी उठानी ही होगी

सार्वजनिक उपक्रमों और सरकारी विभागों को छोड़कर आज तमाम संगठित-असंगठित क्षेत्र की मज़दूर आबादी एक बार फिर बारह से लेकर अठारह-अठारह घंटे खटने के लिए मजबूर है। सरकारी विभागों तक में ठेका प्रथा का बोलबाला हो चुका है। सभी औद्योगिक क्षेत्रों में न्यूनतम मज़दूरी कानून की धज्जियां उड़ायी जा रही हैं। नये श्रम क़ानूनों को थोपने की तैयारी आखिरी चरण में पहुंच चुकी है। इसके लागू हो जाने के बाद मज़दूर पूंजीपतियों के रहमो-करम पर छोड़ दिये जायेंगे। मज़दूरों और मालिकों के बीच किसी विवाद में अब सरकार अपनी मध्यस्थ की भूमिका से पल्लू झाड़ लेगी। पूंजीपति मनमाने ढंग से मज़दूरों से काम करवायेंगे। 'हायर एंड फायर' की तर्ज पर जब चाहेंगे काम पर रखेंगे, जब चाहेंगे निकाल बाहर करेंगे। नये श्रम क़ानूनों को किश्तों में लागू करने की शुरुआत भी हो चुकी है। अभी पिछले बजट के जरिये सरकार ने एक हजार से कम संख्या वाली औद्योगिक इकाइयों के मज़दूरों की मनचाही छंटनी करने का अधिकार पूंजीपतियों को दे दिया है।

इन हालात में आज "काम के घंटे आठ करो" का नारा देश के मज़दूर आन्दोलन के लिए एक नया अर्थ ग्रहण कर चुका है। जब पहली बार मज़दूर वर्ग ने यह मांग संगठित रूप में उठायी थी तब मज़दूर वर्ग ने वर्ग-चेतना की दुनिया में प्रवेश किया था। आज 115 वर्षों बाद मज़दूर वर्ग को यह मांग नये सिरे से उठानी होगी। उसे हुक्मरानों के सामने अपना एक नया चार्टर पेश करना होगा। लेकिन इसका अर्थ यह भी नहीं है कि आज मज़दूर वर्ग की चेतना वहीं खड़ी है, जहां 115 वर्ष पहले थी।

पिछली शताब्दी में मई दिवस की क्रान्तिकारी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए दुनिया के मज़दूर वर्ग ने जो अनेक महान लड़ाइयां लड़ी हैं, उनके कीमती सबक आज उसके पास हैं। 1917 में रूस में सम्पन्न महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति, 1949 में चीन में सम्पन्न महान नव जनवादी क्रान्ति और 1966-67 में चीन में शुरू हुई महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति की विरासत दुनिया के मज़दूर वर्गके पास है जो आने वाले समय की मज़दूर क्रान्तियों के रास्ते को रौशन करती रहेगी। बेशक बीसवीं सदी की ये महान मज़दूर क्रान्तियां पराजित हो गयी हैं लेकिन इनके अनुभवों से मज़दूर वर्ग ने जो सबक हासिल किये हैं वे आज उसकी अमूल्य धरोहर बन चुके हैं। इन महान क्रान्तियों और सामाजिक प्रयोगों ने दुनिया को यह दिखा दिया है कि हर प्रकार के शोषण-उत्पीड़न, हर प्रकार की दासता से आज़ाद एक नयी दुनिया बनाने में मज़दूर वर्ग सभी मेहनतकश वर्गों की अगुवाई करने में सक्षम है। आज दुनिया भर में वर्ग सचेत मज़दूर और उसके क्रान्तिकारी हिरावल इन महान क्रान्तियों से हासिल चेतना की ऊंची जमीन पर खड़े हैं और पिछली हारों से सबक लेते हुए नयी मज़दूर क्रान्तियों की तैयारियों में जुटे हुए हैं। इन क्रान्तियों की पराजयों से जो फर्क पड़ा है वह यह है कि मज़दूर आन्दोलन की क्रान्तिकारी धारा फिलहाली तौर पर कमजोर पड़ी है और भितरघातियों ने मज़दूर आन्दोलन पर कब्जा कर आम मज़दूरों की संघर्ष चेतना और उनकी एकजुटता की भावना को खोखला बना दिया है। इस तरह उन्होंने संकटग्रस्त पूंजीवाद-साम्राज्यवाद को चैन की कुछ सांसे मुहैया करा दी हैं।

लेकिन, विश्व पूंजीवाद को मिली यह राहत बेहद तात्कालिक है। आज साम्राज्यवादी भूमण्डलीकरण की जिस प्रक्रिया के जरिये दुनिया के लुटेरे अपने संकटों से निजात पाने के मंसूबे बांधे हुए हैं वह उनके लिए आत्मघाती साबित होने वाला है। मज़दूर वर्ग की संगठित शक्ति को बिखरा देने की जिस रणनीति पर वह अमल कर रहा है वह उसके लिए उलटवार साबित होगी। एक कारखाने की असेम्बली लाइन और उत्पादन प्रक्रिया को बिखराकर उसे भूमण्डलीय असेम्बली लाइन और भूमण्डलीय उत्पादन प्रक्रिया का अंग बनाकर वह दुनिया के मज़दूर वर्ग की एकजुटता का एक नया आधार तैयार कर रहा है। यह प्रक्रिया मज़दूर वर्ग की चेतना को एक ऊंची छलांग लगाने का आधार तैयार कर रही है। श्रम की भूमण्डलीय लूट की यह नयी व्यवस्था पूरे भूमंडल पर मेहनतकश वर्ग की तबाही का जो मंजर रच रही है उससे हर ओर बारूद की ढेरियां इकट्ठा होती जा रही हैं। समूचे भूमण्डल पर पलीता बिछता जा रहा है जो दुनिया के शोषकों को विनाश के सन्निकट पहुंचाता जा रहा है। फैसलाकुन वर्ग-युद्ध की घड़ियां करीबतर आती जा रही हैं।

दुनिया के इन नये हालात में आज मई दिवस के अवसर पर सभी वर्ग-चेतना से सम्पन्न मज़दूरों और उसके क्रान्तिकारी हिरावलों की सबसे पहली जिम्मेदारी यही बनती है कि वे आम मज़दूर आबादी को हताशा-निराशा की गुफा से बाहर निकालने के लिए मई दिवस की क्रान्तिकारी स्पिरिट को ज़िन्दा करें। जबसे मज़दूर वर्ग ने वर्ग-चेतना की दुनिया में पहला कदम रखा था, तबसे लेकर आज तक सभी जीती गयी और हारी गयी छोटी-बड़ी सभी लड़ाइयों के सबकों से खुद लैस होना और फिर आम मज़दूरों को आने वाली फैसलाकुन जंग के लिए तैयार करना – यह आज के मज़दूर आन्दोलन के क्रान्तिकारीकरण का अहम कार्यभार है।

मई दिवस के अवसर पर आइये हम इस कार्यभार को पूरा करने की प्रतिज्ञा करें। आज मज़दूर वर्ग को वर्ग-चेतना की नई उन्नत दुनिया के प्रवेश द्वार तक पहुंचाने के लिए हमें यह कार्यभार पूरा करना ही होगा। मई दिवस के क्रान्तिकारी वारिसों को यह जिम्मेदारी उठानी ही होगी।

(पृष्ठ 1 से आगे)

पश्चिम बंगाल का भविष्य

अगर कोई चीज़ पूरी तरह नदारद है तो वह है पश्चिम बंगाल के मेहनतकशों का भविष्य जिनका हिमायती होने का दम उनकी पार्टी आज भी भरती रहती है।

जिस नयी आर्थिक नीति के विरोध में सी.पी.एम. के बात-बहादुरों ने संसद में चीख-पुकार मचायी और सड़कों पर अपनी ट्रेड यूनियनों से कवायद करवायी, वह विरोध की नौटंकी थी, यह बुद्धदेव भट्टाचार्य के लेख से बिल्कुल साफ उजागर हो जाती है। वह लिखते हैं कि "*भारत सरकार द्वारा 1991 में घोषित नयी आर्थिक नीति ने हमें पहली बार राज्य में औद्योगिक विकास के लिए स्वतंत्र रूप से योजना बनाने का अवसर दिया। हम समुचित और तीव्र औद्योगिक विकास के हितों के मद्देनज़र उद्योगों को लाइसेंसमुक्त करने और नियम-क़ानूनों की जकड़न को ढीला करने का स्वागत करते हैं।*"

समग्रता में नयी आर्थिक नीतियों का स्वागत करने के बाद 'गुड़ खाये, लेकिन गुलगुले से परहेज' वाली कहावत चरितार्थ करते हुए बुद्धदेव भट्टाचार्य केन्द्र सरकार से नयी आर्थिक नीति के कुछेक पहलुओं को लेकर शिकवा-शिकायत करते हैं और विश्व व्यापार संगठन से किये गये वायदों को पूरा करने से देश की "आर्थिक सम्प्रभुता" पर पैदा हुए ख़तरों पर घड़ियाली आंसू बहाते हैं।

देश की आर्थिक सम्प्रभुता की यह चिन्ता कितनी दोगली है यह भी इसी लेख से स्पष्ट हो जाती है। 1994 में ज्योति बसु सरकार के कार्यकाल में घोषित नयी औद्योगिक नीति के बारे में गर्वपूर्वक चर्चा करते हुए बुद्धदेव भट्टाचार्य इस लेख में विदेशी पूंजी को दिये जाने वाले प्रोत्साहनों और विदेशी पूंजी के सहकार वाली कई परियोजनाओं के बारे में विस्तार से बताते हैं।

पश्चिम बंगाल के औद्योगिक विकास के नाम पर विदेशी पूंजी को दिये जाने वाले प्रोत्साहनों में, जिसे स्वयं मुख्यमंत्री महोदय सबसे आकर्षक मानते हैं वह है उनके राज्य में उपलब्ध सस्ता श्रम। इस सस्ते श्रम की चर्चा वह शिकारी को चारा फेंकने के अन्दाज में करते हैं।

लेख में पश्चिम बंगाल के औद्योगिक वातावरण के बारे में फैली "भ्रांतियों" का निवारण बुद्धदेव भट्टाचार्य ने इन शब्दों में किया है: "*हम गैरजिम्मेदार ट्रेड यूनियन गतिविधियों और औद्योगिक क्षेत्रों में हिंसा व डराने-धमकाने की कार्रवाइयों का समर्थन नहीं करते। ... हमने साफ तौर पर ट्रेड यूनियनों को अपनी राय से अवगत करा दिया है और उन्होंने उद्योग जगत के साथ पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया है।*"

उद्योग जगत को और अधिक ठोस ढंग से आश्वस्त करने के लिए मुख्यमंत्री केन्द्रीय श्रम मंत्रालय द्वारा 17 मई 2000 को जारी एक वक्तव्य का हवाला देते हुए लिखते हैं कि 1998-99 के दौरान औद्योगिक हड़तालों के मामले में पश्चिम बंगाल ग्यारहवें स्थान पर था। वह एक बार फिर आश्वासन देते हैं कि "*हमारी सरकार मैनेजमेंट और मज़दूरों के बीच सौहार्दपूर्ण समझदारी कायम करने के लिए वचनबद्ध है।*"

जाहिर है कि बुद्धदेव भट्टाचार्य की वचनबद्धता मज़दूर क्रान्ति, समाजवाद या इससे मिलते-जुलते विचारों या शब्दों के प्रति रंचमात्र भी नहीं है। उनकी वचनबद्धता सौ फीसदी उद्योग जगत के प्रति है। भला ऐसा क्यों न हो? भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) में अपना राजनीतिक जीवन जीने के दौरान जिस मार्क्सवाद का पाठ उन्होंने अपने सीनियर कामरेडों से सीखा है वह मार्क्सवाद इतना ही घिनौना और बदबूदार है। वह मज़दूरों की पीठ में छुरा भोंकता है और इसी तरह पूंजीपतियों के तलुए चाटता है। वह पूंजीपतियों के बर्बर शोषण के खिलाफ मज़दूरों के संघर्ष की जगह "औद्योगिक शान्ति" और "श्रम उत्पादकता" बढ़ाने की भाषा बोलता है। बुद्धदेव भट्टाचार्य जो कुछ कह रहे हैं या कर रहे हैं उस पर किसी वर्ग सचेत मज़दूर को आश्चर्य नहीं होना चाहिए। मज़दूर वर्ग के हितों के साथ यह गद्दारी पार्टी के बुजुर्गों से उन्हें विरासत में मिली है।

बुद्धदेव भट्टाचार्य जिस "गौरवशाली" विरासत को आगे बढ़ा रहे हैं, ज्योति बसु उसके एक प्रमुख जीवित स्तम्भ हैं। मुख्यमंत्री की कुर्सी छोड़ने के बाद पूंजीपतियों की सभाओं में वह अक्सर भावुक हो जाते हैं और इस भावातिरेक में अक्सर बहुत कुछ ऐसा कह जाते हैं जो उनके जैसे घाघ संशोधनवादी के लिए शोभा नहीं देता। ऐसा ही एक भावोद्गार पिछले साल 10 नवम्बर को बंगाल के चोटी के पूंजीपतियों-व्यापारियों की एक सभा में उनके मुंह से बरबस फूट पड़ा। उन्होंने कहा कि "*हड़ताल करना मज़दूरों का अधिकार है, वे तो ऐसा करेंगे ही। आप लोगों को भी लॉक आउट करने का हक है, आप भी ऐसा करेंगे। पर दोनों को एक दूसरे को समझना चाहिए। मैंने मज़दूरों से कहा है कि हड़ताल करने के पहले आप उत्पादकता भी देखिए, उत्पादकता नहीं रही तो मुनाफा नहीं होगा और मुनाफा नहीं होगा तो आपका विकास नहीं होगा। व्यवसाय कोई समाज सेवा करने से नहीं होता, मुनाफा आप कमाएंगे ही। पर जरा यह भी सोचिए कि मज़दूरों को उचित हक मिले।*"

पूंजीपतियों की इस सभा में ज्योति बसु इतने भावुक हो गये थे कि उन्होंने रौ में बहते हुए खुद अपने गाल पर करारे तमाचे जड़ लिए।

उन्होंने यहां तक कह डाला कि "*जब मैं पहले ट्रेड यूनियन आन्दोलन करता था तो उत्पादकता पर नहीं सोचता था। बाद में मैंने सोचा कि उत्पादकता नहीं बढ़ने और ट्रेड यूनियन चलाने से किसी का भला नहीं होगा।*"

ज्योति बसु को इस बात के लिए मुबारकबाद दिये बिना नहीं रहा जाता कि ट्रेड यूनियन आन्दोलन और सत्ता सुख के अनुभवों के तुलनात्मक अध्ययन से जिस जीवन-सत्य का साक्षात्कार उन्हें हुआ उसे उन्होंने पूरी ईमानदारी के साथ प्रस्तुत कर दिया। एकदम खरी बात उन्होंने कह डाली। मज़दूर वर्ग से गद्दारियों के अपने लम्बे अनुभव की पोटली सभी ज़रूरी हिदायतों के साथ उन्होंने बुद्धदेव भट्टाचार्य को सौंपी है। इससे भट्टाचार्य को जो दिव्यदृष्टि मिली है उससे वह बदस्तूर पूंजीपतियों की सेवा और मज़दूर वर्ग से गद्दारियों का सिलसिला आगे बढ़ाते रहेंगे।

क्या देश का मज़दूर वर्ग इन गद्दारों को कभी भूल सकता है?

(पृष्ठ 5 से आगे)

मज़दूरों की छंटनी से उठे कुछ सवाल

कितनी छंटनी हुई होगी, इसका अंदाजा लगाया जा सकता है। छंटनी की इस कार्रवाई को बजट के ठीक एक-दो दिन पहले करके पूंजीपतियों ने मज़दूरों का पूरे देश के पैमाने पर अरबों रुपये हड़प लिये। क्या पूंजीपतियों को पहले से मालूम था कि वित्तमंत्री महोदय इस बजट में छंटनी का नया और आसान नुस्खा पेश करने वाले हैं? घटनाक्रम तो यही बताता है कि सब कुछ पूंजीपतियों की जानकारी में था। वैसे भी वाजपेयी सरकार की सारी नीतियां पूंजीपतियों की एक कमेटी ही तय करती है, तो बजट गोपनीय भला कैसे रह सकता है?

मज़दूरों की इस बड़ी आबादी की न तो कोई ट्रेड यूनियन है और न ही अन्य कोई संगठन। ऐसे में इनके छोटे-छोटे कारखानों में कोई स्वतंत्र संघर्ष लम्बे समय तक नहीं चलाया जा सकता है। पूंजी की मार पूरे देश के मज़दूर वर्ग को एकजुट करने का आधार तैयार कर रही है, हमें उसे पहचानकर एक लम्बी, कठिन लड़ाई की तैयारी में जुटना होगा।

– ओ.पी. सिन्हा

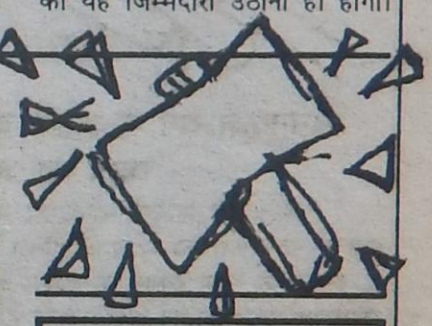

अन्याय, असमानता, शोषण-दमन के विरुद्ध

विद्रोह न्यायसंगत है!

विद्रोह हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।

विद्रोह करो!

विद्रोह से क्रान्ति की ओर आगे बढ़ो!

जन्मदिन (22 अप्रैल) के अवसर पर

लेनिन के साथ दस महीने

– एल्बर्ट रीस विलियम्स

एल्बर्ट रीस विलियम्स उन पांच अमेरिकी जनों में से एक थे जो अक्टूबर क्रान्ति के तूफानी दिनों के साक्षी थे। वे 1917 के बसंत में रूस पहुंचे। उस समय से लेकर अक्टूबर क्रान्ति तक, वे तूफान के साक्षी ही नहीं बल्कि भागीदार भी रहे। इस दौरान उन्होंने व्यापक जनता के शौर्य एवं सृजनशीलता के साथ ही बोल्शेविक योद्धाओं के जीवन को भी निकट से देखा। लम्बे समय तक वे लेनिन के साथ-साथ रहे। क्रान्ति के बाद जुलाई, 1918 तक उन्होंने दुनिया भर की प्रतिक्रियावादी ताकतों से जूझती पहली सर्वहारा सत्ता के जीवन-संघर्ष को निकट से देखा।

स्वदेश लौटकर रीस विलियम्स ने दो किताबें लिखीं – **'लेनिनः व्यक्ति और उनके कार्य'** तथा **'रूसी क्रान्ति के दौरान'**। ये दोनों पुस्तकें एक जिल्द में **'अक्टूबर क्रान्ति और लेनिन'** नाम से राहुल फाउंडेशन, लखनऊ से प्रकाशित हो चुकी हैं।

लेनिन के जन्मदिवस के अवसर पर हम रीस विलियम्स की पूर्वोक्त पहली पुस्तक का एक हिस्सा 'बिगुल' के पाठकों के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।

– संपादक

3. लेनिन द्वारा राज्य के जीवन में कठोर अनुशासन का संचरण

मैंने 27 अक्टूबर (9 नवम्बर) को लाल गार्डों[1] के साथ जाने का अनुमति-पत्र प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की, जो उस समय कज़्ज़ाकों और प्रतिक्रान्तिवादियों के साथ लड़ने के लिए सभी ओर जा रहे थे। मैंने हिलक्विट[2] एवं हाइजमैंस[3] के हस्ताक्षरों वाले अपने परिचय-पत्र प्रस्तुत किये। मैं परिचय-पत्रों को बहुत ही प्रभावोत्पादक समझता था। मगर लेनिन का ख्याल ऐसा नहीं था। उन्होंने संक्षिप्त "नहीं" के साथ ये परिचय-पत्र मुझे वापस कर दिये, मानो वे यूनियन लीग क्लब से प्राप्त किये गये हों।

यह एक मामूली, मगर सर्वहारा वर्ग की सोवियतों के नये एवं सख्त दृष्टिकोण की परिचायक घटना थी। अब तक जन-समुदाय अपने को नुकसान पहुंचाकर भी अत्यधिक नर्मी एवं सहृदयता का व्यवहार करता रहा था। लेनिन ने अनुशासन क़ायम करने का संकल्प किया। वे इसे अच्छी तरह जानते थे कि केवल सुदृढ़ एवं कठोर कार्रवाई द्वारा ही भूख, विदेशी सशस्त्र हस्तक्षेप और प्रतिक्रियावाद से क्रान्ति की रक्षा हो सकती है। इसलिए जब बोल्शेविकों के शत्रु उन पर प्रहार करने के लिए गाली-गलौज के अपने भण्डार को खाली कर रहे थे, वे किसी दया-माया और संकल्प-विकल्प के बिना अपने निर्णयों को कार्यान्वित करने में संलग्न थे। पूंजीशाही के प्रति लेनिन दृढ़ और निर्मम थे। उस समय पूंजीपति उन्हें प्रधानमंत्री लेनिन नहीं, बल्कि "क्रूर लेनिन", "तानाशाह लेनिन" कहा करते थे। और दक्षिणपंथी समाजवादियों के कथनानुसार तो पुराने जार रोमानोव निकोलाई द्वितीय का स्थान नये जार निकोलाई लेनिन ने ग्रहण कर लिया था। उन्होंने मजाक उड़ाते हुए नारा लगाया, "हमारे नये जार निकोलाई तृतीय ज़िन्दाबाद!"

एक किसान के सम्बन्ध में हास्यपूर्ण प्रसंग से वे बड़े प्रसन्न हुए। यह घटना उस रात घटी, जब किसानों के प्रतिनिधियों की सोवियत ने नई सोवियत सरकार को अपना समर्थन प्रदान करते हुए स्मोल्नी के हाल में दावत के साथ इस समारोह को उल्लासपूर्वक मनाया। बुद्धिजीवियों ने गांवों के सम्बन्ध में भाषण किये। फिर यह मांग हुई कि कोई ग्रामीण स्वयं गांव के बारे में कुछ कहे। किसान की पोशाक पहने एक वृद्ध ग्रामीण मंच पर आया। उसकी दाढ़ी सफेद और चेहरा गुलाबी था, उसकी आंखें चमक रही थीं और उसने ग्रामीण बोली में भाषण दिया।

"तोवारिश्ची (साथियो), जब हम पताका फहराते और बाजे बजाते हुए आज रात यहां पहुंचे, तो हम बहुत ही खुश थे। मैं जमीन पर चलकर नहीं, खुशी से हवा में उड़ता हुआ यहां आया हूं। मैं अज्ञान के अन्धेरे में डूबे गांव का एक मूढ़ व्यक्ति हूं। आपने हमें प्रकाश दिया है। मगर हम लोग यह सब कुछ नहीं समझ पा रहे हैं, इसलिए गांववालों ने जानने-समझने के लिए मुझे यहां भेजा है। परन्तु, साथियो, इस आश्चर्यजनक परिवर्तन से हम बहुत प्रसन्न हैं। पुराने समय में चिनोव्निकी (नौकरशाहों) का व्यवहार हमारे प्रति बहुत कठोर था और वे हमें पीटा करते थे, मगर अब वे बहुत विनम्र हो गये हैं। पहले हम केवल बाहर से ही महलों को देख सकते थे, अब हम सीधे उनके भीतर जा सकते हैं। पुराने समय में हम जार की केवल चर्चा ही किया करते थे, मगर अब हमें बताया जाता है कि कल मैं स्वयं जार लेनिन से हाथ मिला सकता हूं। ईश्वर उन्हें दीर्घायु बनावे!"

उक्त कथन पर हाल में उपस्थित लोगों की हंसी का फौव्वारा फूट पड़ा। अट्टहास और तालियों की गड़गड़ाहट से आश्चर्यचकित हो किसान बैठ गया। परन्तु दूसरे दिन उसने लेनिन से मुलाकात की और बाद में वह किसानों के प्रतिनिधि के रूप में ब्रेस्त-लितोव्स्क गया।

अव्यवस्था के उन दिनों में केवल दृढ़ संकल्प और प्रबल धैर्य अपेक्षित था। सभी विभागों में कड़ी व्यवस्था और अनुशासन क़ायम किया गया। कोई भी इसे देख सकता था कि मज़दूरों की नैतिक शक्ति दृढ़ होती जा रही है और सोवियत शासन-व्यवस्था के ढीले पेंचों को कसा जा रहा है। सोवियत सरकार अब जो भी कार्रवाई शुरू करती, जैसे बैंक-व्यवस्था को अपने अधिकार में लेने की कार्रवाई, तो वह सख़्ती से प्रभावोत्पादक क़दम उठाती। लेनिन जानते थे कि कहां तेजी से कार्रवाई होनी चाहिये और साथ ही यह भी कहां धीमी गति से क़दम उठाने चाहिये। मज़दूरों के एक प्रतिनिधिमंडल ने लेनिन के पास जाकर यह प्रश्न किया कि क्या वे उनकी फैक्टरी के राष्ट्रीयकरण का आदेश जारी नहीं कर सकते।

लेनिन ने एक कोरा फार्म हाथ में उठाते हुए कहा, "हा, जहां तक मेरा सम्बन्ध है, तो यह बहुत आसान काम है। मुझे तो बस इतना ही करना है कि यहां, इस फार्म में, आपके कारख़ाने का नाम लिख दूं, यहां अपने हस्ताक्षर करूं और सम्बन्धित कमिसार का नाम यहां भर दूं।"

मज़दूरों के प्रतिनिधिमंडल के सदस्य बहुत संतुष्ट और प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा, "बहुत खूब!"

लेनिन ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, "परन्तु फार्म को भरने से पहले मैं, आप लोगों से निश्चय ही कुछ प्रश्न पूछना चाहता हूं। पहला सवाल यह है कि क्या आप जानते हैं कि आपको फैक्टरी के लिए कच्चा माल कहां मिलेगा?"

उन्होंने झिझकते हुए स्वीकार किया कि उन्हें इसकी जानकारी नहीं है।

लेनिन ने दूसरा प्रश्न किया, "क्या आप लोग हिसाब-किताब रखना जानते हैं और क्या आप लोगों ने उत्पादन-स्तर को बनाये रखने की प्रणाली निर्धारित कर ली है?"

मज़दूरों ने खेद के साथ माना कि उन्हें इन छोटी-मोटी बातों की बहुत कम जानकारी है।

लेनिन आगे बढ़े, "साथियो, अन्त में आपसे यह पूछना चाहता हूं कि क्या आप लोगों ने अपने माल की बिक्री के लिए बाज़ार की तलाश कर ली है?"

उन्होंने पुनः उत्तर दिया, "नहीं।"

प्रधानमंत्री ने कहा, "साथियो, तो क्या आप यह नहीं समझते कि अभी आपने कारखाने को अपने हाथ में लेने की तैयारी नहीं की है? आप वापस जाकर इन प्रश्नों को हल करें। आपको कठिनाई का सामना करना होगा, आपसे बहुत-सी भूलें होंगी, पर ऐसी ही आपको जानकारी प्राप्त होगी। उसके कुछ महीनों बाद आप मुझसे मिलने आइए और तब आपके कारखाने के राष्ट्रीयकरण की बात हम फिर से करेंगे।"

1. मज़दूरों को संगठित करके बनाई गई लाल गार्डों की टुकड़ियां पहले पहल 1905-1907 की प्रथम रूसी क्रान्ति के समय प्रकट हुई थी। 1917 के अन्त और 1918 के शुरू में प्रतिक्रान्तिवादियों के खिलाफ संघर्ष में बोल्शेविकों के नेतृत्व में इन टुकड़ियों ने बहुत बड़ा योगदान किया। 1918 के अप्रैल के अंत में लाल गार्डों की टुकड़ियां लाल फौज में शामिल कर ली गई।

2. हिलक्विट – अमरीका की समाजवादी पार्टी का एक नेता, सुधारवादी, द्वितीय इंटरनेशनल का कार्यकर्ता।

3. हाइजमैंस – बेल्जियम का एक समाजवादी, द्वितीय इंटरनेशनल का कार्यकर्ता।

अक्टूबर क्रांति की 82वीं वर्षगांठ के अवसर पर राहुल फाउण्डेशन की नई प्रस्तुति

अक्टूबर क्रान्ति और लेनिन

सोवियत समाजवादी क्रान्ति की तैयारी से लेकर बाद के दौर तक वहां उपस्थित रहकर युगान्तरकारी घटनाओं के साक्षी रहे अमेरिकी पत्रकार एल्बर्ट रीस विलियम्स की दो दुर्लभ कृतियां :

'रूसी क्रान्ति के दौरान' तथा **'लेनिन : व्यक्ति और उनके कार्य'** एक ही जिल्द में हिन्दी पाठकों के लिए विशेष रूप से

साथ ही रीस विलियम्स का परिचय

मूल्य : रु. 75/- (पेपर बैक) रु. 150/- (सजिल्द)

एल्बर्ट रीस विलियम्स की कृतियां क्रान्तिकारी दौर की घटनाओं में उनके असली नायक आम जन समुदाय के कारनामों और सोच को सामने लाती है तथा लेनिन के मानवीय, जीवन्त और प्रतिभाशाली व्यक्तित्व का प्रामाणिक प्रभावी चित्र प्रस्तुत करती है जिनके साथ उन्हें लम्बे समय तक रहने का अवसर मिला था।

प्राप्त करें :

जनचेतना

डी-68, निराला नगर, लखनऊ-226 020

पंजीयन संख्या - 71980/99 डाक पंजीयन संख्या - LW-NP/349/2000

मई दिवस 1947

मई दिवस पर विशेष सामग्री

यह है एक गाथा पर आप सबके लिए नहीं

आपमें से बस उनके लिए जो ज़िन्दगी से प्यार करते हैं और जो आज़ाद इन्सानों की तरह जीना चाहते हैं। आप सबके लिए नहीं, आपमें से बस उनके लिए, जो हर चीज से नफरत करते हैं, जो अन्यायपूर्ण और गलत है, जो भूख, बदहाली और बेघरबारपन में कोई कल्याणकारी तत्व नहीं देखते। आपमें से उनके लिए, जिन्हें वह समय याद है, जब एक करोड़ बीस लाख लोग बेरोजगार बिल्कुल सूनी-सूनी आंखों से भविष्य को निहारा करते थे। ...

यह है गाथा, उनके लिए, जिन्होंने भूखे शिशु की धीमी पड़ती जाती कराह या इन्सान की वेदना का स्वर सुना हो। आपमें से बस उनके लिए, जिन्होंने तोपों का गर्जन सुना हो और टारपीडो के दागे जाने की आवाज़ पर कान लगाये हो। आपमें से बस उनके लिए, जिन्होंने फासिज्म के द्वारा बिछायी गयी लाशों का अम्बार देखा हो। ...

आपमें से बस उनके लिए, जिन्होंने युद्ध के दानव की मांसपेशियों को फौलादी बनाने में कुछ भी न उठा रखा हो और उसके मेहनताने के रूप में एटमी मौत की नींद हराम कर देने वाला खौफ न पाया हो।

यह गाथा उनक लिए है। उन माओं के लिए जो अपने बच्चों को मरने के बजाय जिन्दा देखना चाहती हैं। उन मेहनतक़शों के लिए, जिन्हें पता है कि फासिस्ट सबसे पहले मज़दूर यूनियनों को ही तोड़ते हैं .. उन भूतपूर्व सैनिकों के लिए, जिन्हें पता है कि जो युद्धोंको जन्म देते हैं, वे ख़ुद नहीं लडते। ... उन छात्रों के लिए, जो जानते हैं कि स्वतंत्रता के बिना ज्ञान और ज्ञान के बिना स्वतंत्रता नहीं मिलती।

उन बुद्धिजीवियों के लिए, जो मौत के मुंह में पहुंचाये जायेंगे, अगर फासिज्म जिंदा रहता है। उन नीग्रो लोगों के लिए जो जानते हैं कि काले लोगों के लिए अलग-थलग बस्तियां और प्रतिक्रियावाद दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

उन यहूदियों के लिए जिन्होंने "सहृदय भद" हिटलर से सीखा कि यहूदी विरोध की भावना असल में क्या होती है। और यह गाथा बच्चों के लिए, सारे बच्चों के लिए, हर रंग, हर नस्ल, हर आस्था-धर्म के बच्चों के लिए, उन सबके लिए लिखी गयी है, उनका भविष्य जीवन से भरपूर हो, मौत से नहीं।

यह गाथा है जनता की शक्ति की, उनके अपने उस दिन की, जिसे उन्होंने स्वयं चुना था और जिस दिन वे अपनी एकता तथा शक्ति का पर्व मनाते हैं। यह दिन है जो अमरीकी मज़दूर वर्ग का संसार को उपहार था और जिस पर हमें हमेशा फख्र रहेगा।

आपको यह उन्होंने नहीं बताया

... स्कूल में आपने इतिहास की पुस्तकों में पढ़ा होगा कि "मई दिवस" की शुरुआत कैसे हुई थी। परन्तु हमारे अतीत में बहुत कुछ उदात्त था और साहस से भरपूर था, जिसे इतिहास के पन्नों से बहुत सावधानी से मिटा दिया गया। कहा जाता है कि "मई दिवस" बाहर से "आयातित" था। परन्तु उन लोगों के लिए, जिन्होंने 1886 में शिकागो में पहले "मई दिवस" के इतिहास की रचना की थी उनके लिए उसमें कुछ भी "आयातित" न था। उसे तो उन्होंने स्वदेशी सूत से बुना था; उजरती श्रम इन्सानों की ज़िन्दगी के साथ क्या करता है, उस पर उनके गुस्से को "आयात" करने की कोई आवश्यकता ही नहीं थी।

पहला "मई दिवस" 1886 में शिकागो नगर में मनाया गया। उसकी भी एक पूर्वपीठिका थी, जिसके दृश्यों को याद कर लेना अनुपयुक्त नहीं होगा। 1886 से पहले एक दशक तक अमेरिकी मज़दूर वर्ग जन्म और संवर्द्धन की प्रक्रिया से गुजर रहा था। पर यह प्रक्रिया कदापि रक्तहीन नहीं थी। देखते ही देखते एक महासागर से दूसरे महासागर तक फैले किशोर राष्ट्र ने नये-नये नगर खड़े कर दिये, मैदानों में रेलवे लाइनों का जाल बिछाकर उन्हें एक-दूसरे से जोड़ दिया, उन बीहड़ अगम्य घोर अंधेरे वनों को वशीभूत किया, जिन पर पहले कभी मनुष्य के पांव नहीं पड़े थे: और अब वह पहला औद्योगिक देश बनने की राह पर आगे बढ़ रहा था। और ऐसा करत समय वह राष्ट्र उन लागा पर ही टूट पड़ा, जिन्होंने कमरतोड़ मेहनत की थी और अपने हाथों से उसका, जिसे अमरीका कहते हैं निर्माण किया था। इस नये राज्य ने उन मेहनतक़शों के शरीर से उनका जीवन ही निचोड़ डाला।

स्त्री-पुरुष और यहां तक कि बच्चे भी नये-नये अमरीकी कल-कारखानों में अक्षरश: दम टूटने तक मेहनत करते थे। बारह घंटे का कार्य-दिवस सामान्य रूप से लागू था; 14 घंटे काम का दिन दुर्लभ नहीं था और कई स्थानों में बच्चों तक को सोलह से लेकर अठारह घंटे रोज काम करना पड़ता था। उजरत बहुत ही कम हुआ करती थी, वह अक्सर दो जून रोटी पाने के लिए भी काफी नहीं होती थी। और उधर विषादमय नियमितता के साथ मंदी का समय-चक्र घूमता रहा और उसके साथ आम बेरोजगारी का दौर-दौरा शुरू हुआ। सरकारी निषेधाज्ञाओं के जरिये शासन रोज की बात थी।

परन्तु अमरीकी मज़दूर वर्ग

हावर्ड फास्ट

दीन-हीन, बेजुबान नहीं था। उसने स्थिति स्वीकार नहीं की, उसे किस्मत में बदी बात मानकर सहन नहीं किया। उसने जवाबी हमला किया और पूरी दुनिया को मेहनतक़शों के जुझारूपन का पाठ पढ़ाया। उस जुझारूपन की आज भी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती।

1877 में वेस्ट वर्जीनिया प्रदेश

में मार्टिन्सबर्ग में रेल-हड़ताल शुरू हुई। हथियारबंद पुलिस बुला ली गयी। मज़दूरों के साथ थोड़ी देर की लड़ाई के बाद हड़ताल कुचल दी गयी। परन्तु केवल स्थानीय तौर पर। जो चिन्गारी भड़की थी, वह ज्वाला बन गयी। "बाल्टीमोर और ओहिओ" रेलमार्ग बंद हुआ, फिर पेन्सिल वानिया बन्द हुआ। फिर क्या था एक के बाद दूसरी रेल कम्पनियों का चक्का जाम होता चला गया। और आखिरकार एक छोटा-सा धमाका इतिहास में ऐसी रेल हड़ताल के रूप में दर्ज हुआ जिसे दुनिया ने न पहले कभी देखा था और न सुना था। दूसरे उद्योग भी उसमें शामिल हो गये। कई इलाकों में रेल-हड़ताल आंम हड़ताल में तब्दील हो गयी। पहली बार सरकार और साथ ही मालिक-समुदाय को पता चला कि मज़दूर की ताकत क्या होती है। उन्होंने पुलिस और फौज बुलायी; जगह-जगह जासूस तैनात किये गये। कई जगहों में जमकर लड़ाइयां हुईं। सेंट लुई में नागरिक प्रशासन के अधिकारियों ने हथियार डाल दिये और नगर मज़दूर वर्ग के हवाले कर दिया। उन लोमहर्षक "विस्फोटों" में कितने हताहत हुए होंगे, उन्हें आज कोई नहीं गिना सकता। परन्तु हताहतों की संख्या बहुत बड़ी रही होगी, इस पर कोई भी, जिसने स्थिति का अवलोकन अध्ययन किया, सन्देह नहीं कर सकता

हड़ताल आखिरकार टूट गयी। परन्तु अमरीकी मज़दूर अब अपनी भुजाएं फैलाने लगे, उनके श्वास-उच्छवास में नयी जागरूकता को महसूस किया जा सकता था। प्रसव-वेदना समाप्त हो चुकी थी, नये युग का पदार्पण हो चुका था।

अगला दशक संघर्ष का दौर था। शुरू-शुरू में तो जीवित रहने का संघर्ष जिसके गर्भ से संगठन बनाने के संघर्ष ने जन्म लिया। सरकार ने 1877 को सहज ढंग से नहीं भुलाया। अमरीका के भिन्न-भिन्न शहरों में शस्त्रागारों का निर्माण होने लगा था, मुख्य सड़कें चौड़ी की जाने लगीं, ताकि "गैटलिंग"' मशीनगनें उन्हें अपने नियंत्रण में रख सकें।

एक प्राइवेट श्रम-पुलिस संगठन "पिंकरटन एजेंसी" का गठन किया गया। मज़दूरों का दमन करने के लिए कार्रवाइयां अधिकाधिक क्रूर रूप धारण करती चली गयीं। वैसे तो अमरीका में "लाल खतरे" फिकरे का उपयोग प्रोपेगैंडा के लिए 1830 के दशक से ही होता चला आया था, लेकिन उसे अब एक ऐसे डरावने हौवे का रूप दे दिया गया, जो आज प्रत्यक्ष तौर पर हमारे सामने है।

परन्तु मज़दूर चुपचाप हाथ पर हाथ रखे नहीं बैठे रहे। भूमिगत रूप में जन्मे नाइट्स आफ लेबर (श्रम-सूरमा) के सदस्यों की संख्या 1886 तक 700000 से ज्यादा हो गयी थी। नवजात अमेरिकन फेडरेशन आफ लेबर (अमरीकी मज़दूर संघ) का मज़दूर यूनियनों की स्वैच्छिक संस्था के रूप में गठन किया गया, जिनके लक्ष्यों में से एक समाजवाद था। यह संस्था बहुत तेज रफ्तार से विकसित होती चली गयी। यह वर्ग-सचेत और जुझारू थी और अपनी मांगों की पूर्ति के लिए चटटान की तरह अडिग थी। एक नया नारा बुलंद हुआ; एक नयी, दो टूक, साफ-साफ मांग पेश की गयी: "आठ घंटे मज़दूरी, आठ घंटे नींद, आठ घंटे मनोरंजन"

1886 तक अमरीकी मज़दूर युवा बाहुबली बन चुका था, जो अपनी ताकत परखने के लिए तैयार था। उसका मुकाबला करने के लिए सरकारी शस्त्रागारों का निर्माण किया गया, पर वे नाकाफी थे। "पिंकरटनों" का प्राइवेट पुलिस दल नाकाफी साबित हुआ, गैटलिंग मशीनगनें भी नाकाफी रहीं। संगठित मज़दूर कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ते जा रहे थे। उनका एक ही जुझारू नारा था। "एक दिन में आठ घंटे का काम, इससे जरा भी ज़्यादा नहीं"। और यह नारा देश के एक छोर से दूसरे छोर तक प्रतिध्वनित होता रहा।

उस जमाने में, 1886 में, शिकागो संघर्षशील, वामपक्षी मज़दूर आन्दोलन का केन्द्र था। यहीं शिकागो में संयुक्त मज़दूर प्रदर्शन के विचार ने जन्म लिया। इसे उनका अपना ही दिन बनना था, किसी और का नहीं, ऐसा दिन बनना था, जब वे अपने काम के औजार रख देंगे और कंधे से कंधे मिलाकर अपनी शक्ति प्रदर्शित करेंगे।

पहली मई को मज़दूर वर्ग के दिवस के, जनता के दिवस के रूप में चुना गया। प्रदर्शन करने की तैयारी के वास्ते काफी पहले ही "आठ घंटे का कार्य दिवस" नाम की संस्था गठित कर ली गयी थीं अमैरिकन फेडरेशन आफ लेबर (अमरीकी मज़दूर संघ), "श्रम सूरमा" और सोशलिस्ट लेबर पार्टी (समाजवादी मज़दूर पार्टी) को मिलाकर "आठ घंटे का कार्य दिवस" नामक यह संस्था बनायी गयी थी। शिकागो की सेंट्रल लेबर यूनियन (केन्द्रीय मज़दूर यूनियन) भी, जिसमें सबसे अधिक जुझारू वामपक्षी यूनियनें शामिल थीं) इस संस्था से जुड़ी थीं

शिकागो से शुरुआत कोई मामूली बात नहीं थी। "मई दिवस" की पूर्ववेला में एकजुटता के लिए आयोजित सभा में 25000 मज़दूर उपस्थित हुए। और जब स्वयं "मई दिवस" आया, तो शिकागो के मज़दूरों का सैलाब चारों दिशाओं से उसमें भाग लेने उमड़ने लगा। छोटे-बड़े कल-कारखानों में वे अपने औजार छोड़कर बाहर निकल आये और मार्च करते हुए हजारों की तादाद में आम सभाओं में भाग लेने पहुंचे। और उस समय भी, जब "मई दिवस" का अभी-अभी जन्म ही हुआ था, मध्य वर्ग के हजारों लोग मज़दूरों की कतारों में शामिल थे। और एकता-एकजुटता के इस परिदृश्य की दूसरे बहुत-से अमरीकी शहरों में पुनरावृत्ति हुई

और आज की तरह उस वक्त भी धन-कुबेरों ने रक्तपात, आतंक, न्यायिक हत्या के माध्यम से बदला लेते हुए जवाबी हमला किया। दो दिन बाद मैकार्मिक रीपर कारखाने में, जहां हड़ताल चल रही थी, एक आम सभा पर पुलिस ने हमला किया। उसमें छ: मजदरों की हत्या हुई। अगले दिन इस जघन्य कार्रवाई के विरुद्ध हे मार्केट स्कवायर में मज़दूरों ने प्रदर्शन किया, तो पुलिस ने फिर हमला किया। कहीं से एक बम फेंका गया, जिसके फटने से बहुत से मज़दूर और पुलिस वाले मारे गये। इस बात का कभी पता नहीं चल पाया कि बम किसने फेंका था, इसके बावजूद चार अमरीकी मज़दूर नेताओं को फांसी दे दी गयी, उस अपराध के लिए, जो उन्होंने कभी किया ही नहीं था और जिसके लिए वे निर्दोष सिद्ध हो चुके थे।

आगस्ट स्पाइस ने जो इन शहीदों में से एक थे फांसी के फंदे के पास खड़े होकर बहुत ऊंची आवाज में कहा था:

"एक ऐसा वक्त आयेगा, जब हमारी खामोशी उन आवाज़ों से ज्यादा ताकतवर सिद्ध होगी, जिन्हें आज तुम खामोश कर रहे हो।" कितने सच्चाई भरे थे ये शब्द, यह समय ने सिद्ध कर दिया है। शिकागो ने "मई दिवस" दुनिया को दिया था और बासठवें मई दिवस पर करोड़ों की संख्या में दुनिया के लोगों ने आगस्ट स्पाइस की भविष्यवाणी को सच साबित कर दिया है।

शिकागो में हुए प्रदर्शन के तीन वर्ष बाद संसार भर के मज़दूर वर्ग के

(पेज 5 पर जारी)

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ।
संपादक मण्डल : डा. दूधनाथ, मुकुल। सम्पादकीय पता : द्वारा ओ.पी. सिन्हा, 69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006, सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ।